कृषि विविधीकरण में बागवानी

रणबीर सिंह सैनी, राजेन्द्र कुमार गोदारा, सुरेश फोर,
अमरजीत सिंह एवं उमेश कुमार शर्मा

विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार–125 004

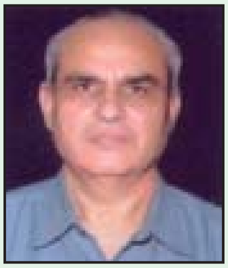

कुलपति
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय
हिसार (हरियाणा)

प्राक्कथन

भारतवर्ष में सत्तर के दशक में हुई हरित क्रान्ति से लेकर आज तक कृषि उत्पादन में निरन्तर वृद्धि होती आ रही है, परन्तु बागवानी जैसे क्षेत्र में वांछित प्रगति व विकास सम्भव नहीं हो पाया है। विशेषकर उत्तर भारत के कुछ राज्यों में जिनमें से हरियाणा भी एक है। इस का मुख्य कारण खाद्यान्नों, दलहन व तिलहन के उत्पादन पर अधिक जोर रहा है। हरियाणा में इस समय फलों के अन्तर्गत कुल कृषि योग्य क्षेत्र नगण्य है। पिछले 30-40 वर्षों में रसायनों के अत्यधिक प्रयोग के फलस्वरूप भूमि की उर्वरा शक्ति का ह्रास हुआ है और उत्पादन में ठहराव की स्थिति उत्पन्न हो गई है। अत: परम्परागत खेती अब निरन्तर सुनिश्चित आय का साधन नहीं रही। दूसरी ओर विश्व व्यापार संगठन समझौता लागू होने के कारण अब किसानों के समक्ष कम लागत व उत्तम गुणवत्ता के विविध उत्पाद तैयार करना सबसे बड़ी चुनौती बन गई है ताकि भारतवर्ष के किसान अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धा में अपने आप को सुरक्षित रख सकें। इस स्थिति में विविधीकरण के तहत विभिन्न फल-फूल, औषधि, खुम्बी व सब्जियों आदि की बागवानी अपनाना एक उत्तम विकल्प है जो उनकी आय में वृद्धि व खेती को टिकाऊ बनाने में अहम भूमिका अदा करेगी। 'कृषि विविधीकरण में बागवानी' नामक तकनीकी बुलेटिन में फल-फूल व सब्जियों की वैज्ञानिक खेती के संदर्भ में संग्रहित जानकारी किसानों व बागवानों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

(जे. सी. कत्याल)

विषय सूची

क्रमांक	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	भूमिका	1
2.	फल-उत्पादन	2
3.	पुष्प-उत्पादन	30
4.	सब्जी-उत्पादन	40

भूमिका

सत्तर के दशक में हुई हरित क्रान्ति के फलस्वरूप भारतवर्ष अन्न उत्पादन में आत्म निर्भर हो गया है। इसके लिए मुख्य तौर पर उन्नत तथा संकर किस्में, रासायनिक खादों का प्रयोग व सिंचाई के साधनों में सुधार उत्तरदायी हैं। तब से लेकर आज तक खाद्यान्न उत्पादन में निरन्तर वृद्धि हुई जिसके परिणामस्वरूप न केवल अन्न के विशाल भंडार जमा है बल्कि हम निर्यात भी कर रहे हैं। परन्तु वर्तमान कृषि परिवेश में यह भी एक कटु सत्य है कि दिन-प्रतिदिन एक तो प्रति हिस्से में आने वाली कृषि भूमि घट रही है, दूसरी ओर कृषि में प्रयोग होने वाले विभिन्न उपादानों जैसे खाद, पानी, दवाईयां, कृषि मशीनरी इत्यादी महंगे होते जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त समय-असमय सूखा, बाढ़ व नित नये कीट व बिमारियों के प्रकोप आदि के कारण कृषि से निरन्तर आय सुनिश्चित समझना बेमानी हो गया है। उपरोक्त में से वर्षा की कमी या सिंचाई के जल का उपलब्ध न होना, (विशेष तौर पर शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों में) सफल उत्पादन में सबसे बड़ी बाधा है। ऐसे हालात में किसानों के लिए मात्र परम्परागत फसलों के सहारे रहना अत्यधिक जोखिम भरा व घाटे का सौदा साबित हो रहा है। इसी के मद्देनजर भारत सरकार व सभी प्रदेशों की सरकारें तथा अनुसंधान व विस्तार में कार्यरत वैज्ञानिक समय-समय पर कृषि विविधीकरण की ओर किसानों का ध्यान आकर्षित करते रहें हैं ताकि एक से अधिक फसलों या व्यवसायों को साथ-साथ अपना कर किसान कृषि से अपनी आय में वृद्धि कर सकें। विविधीकरण के लिए फल उत्पादन, फूलों की खेती, सब्जियों की खेती, खुम्बी उत्पादन, औषधियों व सगंध पौधों की खेती, मधुमक्खी पालन, केंचुआ पालन, मुर्गी, डेयरी व सूअर पालन उपयुक्त सुझाव हैं। इन सभी में से कृषि विविधिकरण में उपयोगिता तथा किसान की आय बढ़ाने में बागवानी का सर्वोपरि स्थान है, क्योंकि यह काफी हद तक उन अवस्थाओं जिनमें अन्य फसलें पूर्णतया असफल हो जाती हैं, भी सफल है जैसे-सूखे व बारानी अवस्था में, लवणीय व क्षारीय भूमि पर आदि। यद्यपि बागवानी के अन्तर्गत कुल कृषि योग्य क्षेत्र का मात्र 8 प्रतिशत है। देश के कुल निर्यात में इसकी भागीदारी 54.5 प्रतिशत हैं। राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली के समीपवर्ती क्षेत्रों के किसानों के लिए तो यह वरदान साबित हो सकती हैं, बशर्ते कि किसान वैज्ञानिक पद्धति व आवश्यक विवेक का प्रयोग करते हुए इस व्यवसाय को अपनाने के लिए तैयार हों। बागवानी के अन्तर्गत निम्नलिखित व्यवसायों को अपना कर कृषि विविधीकरण के उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है।

कृषि विविधीकरण के लिए लाभकारी आयाम :

बागवानी, पशुपालन, मछली पालन, मुर्गी पालन, सूअर पालन, मधुमक्खी पालन व कृषि वानिकी।

उपर्युक्त सभी व्यवसायों में से केवल बागवानी (फल, फूल, खुम्बी व सब्जी उत्पादन) तथा पशुपालन ही ऐसे व्यवसाय हैं जिनसे परम्परागत खेती की तुलना में कहीं अधिक लाभ के साथ-साथ जोखिम न्यूनतम् हैं। इसके अतिरिक्त इन दोनों व्यवसायों से प्राप्त होने वाले उत्पाद समाज के प्रत्येक वर्ग द्वारा प्रयोग किये जाते हैं। अतः इनके प्रचार-प्रसार की सम्भवनाएं सर्वाधिक व सर्वोपरी हैं। हरियाणा प्रदेश की जलवायु अनेक फल-फूल व सब्जी उत्पादन के लिए उपयुक्त है। दिल्ली के समीपवर्ती क्षेत्रों-जैसे जिला झज्जर, रोहतक, सोनीपत, गुड़गाँव, रेवाड़ी, मेवात, फरीदाबाद, भरतपुर, गौतमबुध नगर, गाजियाबाद आदि में यह और भी लाभकारी सिद्ध होगी क्योंकि इस क्षेत्र के किसानों को इनसे प्राप्त उत्पादों के परिवहन व विपणन में भी समस्या नहीं आती। कृषि विविधीकरण में कृषि वानिकी व बागवानी के अन्तर्गत निम्नलिखित नये व लाभकारी आयाम अपनाए जा सकते हैं - फलों की खेती, फूलों की खेती व सब्जियों की खेती।

परम्परागत फसलों की तुलना में बागवानी अपनाने के लाभ :

- प्रति इकाई क्षेत्र अधिक शुद्ध लाभ।
- रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करती है।
- कम उपजाऊ व बंजर भूमि पर भी सम्भव।
- विदेशी मुद्रा अर्जित करने का साधन।
- स्वस्थ राष्ट्र के निर्माण में अहम भूमिका।
- वायुमंडल प्रदूषण नियंत्रण में सहायक।
- नियमित आय का साधन।
- सर्वाधिक बायोमास उत्पन्न करती हैं।
- जीवन की सभी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे भोजन, ईंधन, इमारती लकड़ी आदि प्रदान करती हैं।
- फलदार फसलें दीर्घावधि बीमे समान हैं क्योंकि ये उन अवस्थाओं में भी आय देती हैं जहां अन्य मौसमी/वार्षिक फसलें असफल हो जाती हैं जैसे - सूखे, ओलावृष्टि, अल्पावधि बाढ़, अत्यधिक सर्दी व गर्मी में।

फल-उत्पादन

भूमि का चुनाव

विभिन्न फलों की बागवानी अनेक प्रकार की भूमि जैसे रेतीली, दोमट व चिकनी मिट्टी पर की जा सकती है। परन्तु अधिक पैदावार व उत्तम गुणवत्ता के लिए अच्छी जल निकासी वाली दोमट मिट्टी उत्तम है। भूमिगत जल स्तर तीन मीटर से ऊपर न हो। सफल बागवानी के लिए मिट्टी के अन्य भौतिक व रासायनिक गुण तालिका में दिए गए हैं।

फलदार पौधों की लवणीय सहनशीलता

1. **अत्यधिक लवण रोधक :**

   खजूर, बेर

2. **मध्यम लवण रोधक :**

   आंवला, फालसा, अमरूद, अनार, अंजीर, अंगूर

3. **निम्न लवण रोधक :**

   नाशपाती, संतरा, निम्बू, ग्रेपफ्रूट, आड़ू, आलूबुखारा, आम

बाग लगाने के सिद्धान्त :

1. बाग एक उचित स्थान, भूमि व जलवायु में लगाना चाहिए, जहां पर सफल बागवानी व फलों के विपणन के लिए सभी आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध हों।
2. यदि चुनी गई भूमि पर पहले से खेती नहीं की जा रही हो तो उस पर उग रहे पेड़-पौधे एवं झाड़ी इत्यादि साफ करने के बाद गहरी जुताई करनी चाहिए।
3. स्थानीय परिस्थितियों को मद्देनजर रखते हुए पौधे लगाने की योजना बाग लगाने के मौसम से पूर्व एक कागज पर तैयार करनी चाहिए।
4. सदाबहार फलदार पौधे अगस्त से अक्तूबर व जनवरी-फरवरी में तथा पतझड़ी पौधे सुप्तवास्था (मध्य दिसम्बर से मध्य फरवरी) में लगाने चाहिए।
5. योजना तैयार करते समय प्रति इकाई क्षेत्र अधिकतम पौधों का समावेश करने का प्रयास करना चाहिए। सड़कों, नालों व इमारतों को कम-से-कम जगह देनी चाहिए।
6. बौने एवं सदाबहार फलवृक्ष बाग के सामने वाले तथा पतझड़ी व लम्बे बढ़ने वाले फलवृक्ष बाग के पीछे वाले भाग में लगाने चाहिएं।
7. जिन फलवृक्षों को बार-बार व अधिक सिंचाई की आवश्यकता हो उन्हें जल स्त्रोत के नजदीक लगाना चाहिए।
8. जिन फलों में जानवर, पक्षी व मानव द्वारा अधिक नुकसान की सम्भावना हो, उन्हें चौकीदार के कमरे के समीप लगाना चाहिए।
9. एक साथ पकने वाली किस्मों को एक ही खण्ड में लगाएं।
10. बाग के अति उपजाऊ भाग पर भरपूर पैदावार व आय देने वाले फलवृक्ष लगाने चाहिए।
11. जिन फलदार वृक्षों में स्वयं फलन की क्षमता न हो या कम हो, उनके बीच परागक पौधे लगाने चाहिए।
12. फल, उनकी किस्में व दूरी इत्यादि बाग लगाने से पूर्व निर्धारित कर लेनी चाहिए।

गुण*	निर्धारित स्तर	
	नींबू वर्गीय फल	अन्य फल
खारी अंग	8.5	8.7 यदि विद्युत चालकता 1.0 से नीचे हो
विधुत चालकता (मि. म्होज/सैं.मी.)		
(1:2 :: मिट्टी : पानी)	0.5	1.0
कैल्शियम कार्बोनेट	5.0 प्रतिशत	10.0 प्रतिशत
चूना कंकर	10.0 प्रतिशत	20.0 प्रतिशत

*जमीन में 2 मीटर नीचे तक

बाग लगाने सम्बन्धी प्रक्रिया

बाग लगाने की वास्तविक प्रक्रिया आरम्भ करने से पूर्व जिस भूमि पर बाग लगाना हो उसकी मिट्टी व सिंचाई में प्रयोग किये जाने वाले पानी की जाँच अति अनिवार्य है।

मिट्टी व पानी की जाँच

जिस खेत में बाग लगाना हो, उसके मध्य में एक दो मीटर गहरा गड्ढ़ा खोदें। इस गड्ढ़े के दो उद्देश्य होते हैं। प्रथम उद्देश्य यह सुनिश्चित करना कि दो मीटर तक जमीन में कोई कंकर की परत तो नहीं है। यदि दो मीटर तक कंकर की सतह आती है और वह भी मोटी परत, तो वह खेत ज्यों की त्यों बाग लगाने के लिए उपयुक्त नहीं होती। परन्तु यदि कंकर की सतह परत को करीब पाँच फुट व्यास तक प्रत्येक गड्ढ़े में तोड़ दिया जाये तो उस भूमि पर पौधारोपण सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इस गड्ढ़े का दूसरा उद्देश्य मिट्टी की विभिन्न परतों में पोषक तत्वों की मात्रा पता करना क्योंकि प्रायः फलदार वृक्षों की जड़ें दो मीटर से भी अधिक गहराई तक जाती हैं। इस गड्ढ़े से जमीन के स्तर से 15, 15-30, 30-60, 60-90, 90-120, 120-150 सैं.मी. तथा 150-200 सैं.मी. के सात अलग-अलग नमूने लें व प्रत्येक नमूने की लगभग 250 ग्राम मिट्टी थैलियों में डालकर गहराई लिखें। जिस खेत में कंकर आती है उसका नमूना अलग से ले व नमूने पर कंकर की परत की मोटाई व कंकर कितनी गहराई पर आई, यह अवश्य लिखें।

पानी का नमूना लेने से पहले, ट्यूबवैल को 30-60 मिनट चलाएं। फिर एक काँच की शीशी को 2-3 बार ढ़क्कन सहित सर्फ आदि से धोएं। तत्पश्चात ट्यूबवैल के चलते पानी से ६ ोएं व नमूना लें। सभी नमूनों को निकटतम ßमिट्टी-पानीÞ जाँच प्रयोगशाला में जाँच कराएं। मिट्टी-पानी जाँच सुविधा मृदा विज्ञान विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल (रेवाड़ी), कृषि विज्ञान केन्द्र, नजदीक जाट कालेज, रोहतक तथा कृषि विज्ञान केन्द्र, नजदीक कचहरी, अंबाला शहर में 5 रूपये प्रति मिट्टी नमूना व 10 रूपये प्रति पानी नमूना उपलब्ध है। मिट्टी-पानी की जाँच रिपोर्ट लेकर सम्बन्धित जिले के जिला विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी) अथवा जिला उद्यान अधिकारी या निकटवर्ती केन्द्र के बागवानी विशेषज्ञ से सम्पर्क करें। मिट्टी व पानी की जाँच रिपोर्ट के आधार पर ही उपयुक्त फल एवं किस्में निर्धारित की जाएंगी।

बाग लगाने का समय

फलदार पौधे लगाने के दो समय हैं। पहला वर्षा ऋतु अर्थात वर्षा ऋतु के आगमन से 15 सितम्बर तक तथा दूसरा 15 दिसम्बर से 15 फरवरी तक। वर्षा ऋतु में प्रायः सदाबहार फलवृक्ष लगाये जाते हैं जबकि सर्दी में पतझड़ी फलवृक्ष। बेर के पौधे वर्षा ऋतु में गॉची (अर्थबाल) सहित व जनवरी-फरवरी में गॉची रहित लगाना उत्तम है।

गड्ढ़े खोदना व भरना

पौधारोपण से कम से कम एक माह पूर्व गड्ढ़े खोदने का कार्य आरम्भ करना चाहिए। बड़े फलवृक्षों जैसे आम, अमरूद, बेर, आंवला, नींबू, लीची, जामुन आदि के लिए 3' x 3' x 3' तथा छोटे बढ़ने वाले पौधों जैसे पपीता, करौंदा, फालसा, अंगूर आदि के लिए 1½' x 1½' x 1½' आकार के गड्ढ़े निर्धारित फासले पर खेत का खाका (ले आऊट) तैयार करने के बाद खोदें। खाका तैयार करते समय ध्यान रहे कि पौधों के बीच निर्धारित दूरी का आधा (बेर के लिए 4-4 मीटर) खेत के चारों ओर छोड़ना चाहिए। गड्ढ़े खोदते समय ऊपर की आधी मिट्टी एक ओर डालें व नीचें की आधी दूसरी ओर। गड्ढ़ों को 15-20 दिन तक खुला पड़ा रहने दें ताकि धूप से मिट्टी में मौजूद नुकसानदायक जीवाणु मर जाएं। तत्पश्चात ऊपर की मिट्टी में बराबर मात्रा में गली-सड़ी देसी खाद, 1 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट तथा 30 मि.ली. क्लोरपायरीफॉस 20 ई. सी. प्रति गड्ढ़ा मिलाकर भर दें। अब या तो एक-दो वर्षा पड़ने के बाद या गड्ढ़े में पानी लगाने के बाद पौधारोपण करें।

पौधों का चुनाव

अच्छी नस्ल व उत्तम गुणवत्ता के स्वस्थ पौधे केवल विश्वसनीय पौधशालाओं से ही लें। यही सफल बागवानी का आधार है। इस संदर्भ में राजकीय संस्थानों की पौधशालाओं को प्राथमिकता देनी चाहिए। रास्ते चलते बेचने वाले व उठाऊ पौध शालाओं से कदापि पौधे नहीं लेने चाहिए। पौधशाला से पौधे उखाड़ते समय स्वयं मौजूद रहें व केवल वही पौधे लें जो

बढ़वार में औसत हों, दो वर्ष से अधिक पुराने न हो, मूलवृन्त पर ठीक पेबन्द की गई और मूलवृन्त व आँख का सही मिलान हुआ हो। यह भी ध्यान दें कि पौधे उखाड़ते समय जड़े न कटें व गाँची न बिखरे। चश्मा चढ़ाते समय बांधने में प्रयोग की गई पालीथीन खोल दें। नये स्थान पर लगाते समय पौधे को सीधा गाड़े व जितना भाग नर्सरी में दबा था उतना ही दबाऐं।

फासला

पौधे लगाने के बाद प्रथम 3-4 वर्षो तक नये पौधों की देखभाल की विशेष आवश्यकता होती है। इस दौरान की गई लापरवाही नुकसानदायक सिद्ध होती है।

1. सहारा देना

पौधारोपण के तुरन्त बाद सभी पोधों को बाँस अथवा लकड़ी की सोटी/छड़ी से सहारा देना चाहिए।

2. सिंचाई

पौधों को आवश्यकतानुसार सिंचाई दें। अधिक गर्मी व सर्दी के समय जल्दी-जल्दी सिंचाई दें। चिकनी मिट्टी की तुलना में रेतीली मिट्टी में पानी कहीं अधिक जल्दी-जल्दी देना पड़ता हैं। सिंचाई के पानी के साथ 10-20 मिलीमीटर एण्डोसल्फान 35 ई.सी. या क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. 10 लीटर पानी में घोलकर प्रति पौधा 30-45 दिन में एक बार अवश्य डालें।

वर्तमान कृषि परिवेश में फसल उत्पादन में प्रयोग होने वाले सभी कारको में सर्वाधिक आवश्यक व अल्प उपलब्ध सिचांई जल है, विशेषकर अर्धशुष्क व शुष्क क्षेत्रों में। इन क्षेत्रों में वर्षा का निरन्तर कम होना तथा भूमिगत जल का अत्यधिक दोहन होने के कारण भूमिगत जल स्तर प्रतिवर्ष नीचे जा रहा है। सफल फसल उत्पादन कृषि वैज्ञानिकों व किसान दोनों के लिए चुनौती बन गया है। इस स्थिति से निपटने के लिय वैज्ञानिक अनुसन्धान के माध्यम से समुचित उपाय जुटाने मे प्रयासरत हैं।

फलदार पौधों में सिंचाई की विधियाँ

फलदार वृक्षों मे सिंचाई की विधि पौधों की आयु, भूमि के प्राकृतिक ढ़लान तथा पानी की उपलब्धता पर निर्भर करती है। सिंचाई की विधि बाग की विभिन्न परिस्थितियों को ध्यान में रखकर चुननी चाहिए। पौधों की सिंचाई की निम्नलिखित विधियाँ प्रचलित हैं।

क) बेसिन (थाला) विधि

इस विधि मे प्रत्येक पौधे के चारों ओर एक गोलाकार बेसिन (थाला) बनाया जाता है और उसके बाद प्रत्येक पौधे के बेसिन को एक दूसरे से जोड़ दिया जाता है। इस प्रकार एक नाली (चैनल) तैयार हो जाती है जिसमे सिंचाई का पानी छोड़ दिया जाता है। क्योंकि इस विधि मे पानी पौधों के मुख्य तने के सम्पर्क में आता है इसलिए यह अच्छी विधि नही है। पानी के तने मे सीधा सम्पर्क होने से बिमारियों का प्रकोप हो सकता है। इसके अतिरिक्त इस विधि से पौधों का पूरा जड़ क्षेत्र गीला नहीं होता तथा शुरू के बेसिन का खाद बहकर आने वाले बेसिन मे जा सकता है। यह विधि आमतौर पर छोटे पौधों के लिए प्रयोग की जाती है।

ख) बेसिन विधि

यह फलदार वृक्षों में सिंचाई की सर्वाधिक प्रचलित व लोकप्रिय विधि है जिसमें मुख्य नाले को पौधों की पंक्तियों से इस प्रकार जोड़ा जाता है कि प्रत्येक दो लाइनों के बीच पानी जाने के लिए 30-45 सैं.मी. चौड़ी नाली हो और परन्तु प्रत्येक पौधे के पूरे फैलाव के नीचे थांवला हो। इस थांवले में पानी लगाया जाता है तथा प्रथम थांवले से पंक्ति के अन्तिम थांवले तक पहुंचता है। यह सिंचाई की एक दूसरी विधि है जिससे

पानी की बचत के साथ-साथ खरपतवारों की समस्या कम आती है।

ग) परिवर्तित बेसिन विधि

यह विधि, बेसिन विधि का सुधरा हुआ रूप है। इस विधि मे छोटे-2 गोलाकार बेसिन बनाकर उन्हे एक उप-चैनल से मुख्य चैनल के साथ जोड़ दिया जाता है। मुख्य चैनल पौधों की दो कतारों के बीचों-बीच जाती है। इस विधि मे बेसिन का आकार पौधों की आयु के अनुसार प्रतिवर्ष बढ़ाया जाता है। इस विधि मे दो मुख्य कमियाँ है। एक तो बेसिन को उचित मात्रा में पानी देने के बाद उप-चैनल को मुख्य चैनल से बन्द करना पड़ता है। दूसरा पौधों के बीच निराई-गुड़ाई में कठिनाई आती है।

घ) खुली सिंचाई

यह विधि समतल क्षेत्रों मे बड़े पौधों के लिए प्रयोग की जाती है। यह उस अवस्था मे प्रयोग की जाती है जब पानी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो। इस विधि से पानी बड़ी मात्रा मे व्यर्थ जाता है व सिंचाई के बाद अत्यधिक खरपतवार उगते हैं।

ड़) फर्रो (नाला प्रवाह) विधि

यह विधि ऊँची-नीची भूमि वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है। इस विधि मे पौधों के कतार के दोनों ओर चार से दस इंच गहरी (फर्रो), ढलान के विपरीत बनाई जाती है और इसमें पानी छोड़ दिया जाता है।

च) चैनल विधि

इस विधि मे पौधौं को केन्द्र मे रखते हुए एक नाली (चैनल) बनाई जाती है और उसमे सिचांई का पानी छोड़ दिया जाता है। यह विधि सीमित जड़-क्षेत्रों वाले पौधों के लिए प्रयोग की जाती है। बाद में इसे बेसिन विधि में परिर्वतित कर दिया जाता है।

छ) स्प्रिंकलर विधि

यह विधि पानी की कमी की अवस्था में प्रयोग की जाती है। इस विधि में पानी को दवाब के साथ पाईपों से होते हुए स्प्रिंकलरों मे पहुँचाया जाता है। स्प्रिंकलर को बाग मे इस प्रकार रखा जाता है कि एक स्प्रिंकलर दूसरे स्प्रिंकलर द्वारा सिंचित क्षेंत्र के एक-चौथाई को भी सिंचित करे। उपयुक्त मात्रा में पानी लगने के बाद स्प्रिंकलरों को पाईप सहित दूसरे (असिंचित) स्थान पर रख दिया जाता है और यह प्रक्रिया तब तक जारी रहती है जब तक पूरा एकड़ सिंचित न हो जाए।

यह विधि अति महंगी है क्योंकि स्प्रिंकलर सैट की कीमत बहुत अधिक है। इसे केवल उन अवस्थाओं मे प्रयोग करना चाहिए जहां भूमिगत जल सिंचाई के योग्य न हो, नहर के पानी का प्रबंध न हो या बाग ऊँची-नीची भूमि पर लगा हो। यह केवल बड़े पौधों की सिचांई के लिए प्रयोग की जा सकती है।

ज) टपका-टपका व सूक्ष्म फव्वारा सिंचाई प्रणाली

यह फल-फूल, सब्जी, लॉन व ग्रीन हाउस में सिंचाई की अति आधुनिक प्रणाली है जिसमे एक मुख्य जल स्त्रोत्र (टयूबवैल या टैंक) से आवश्यक व समुचित दवाब के साथ पानी, 12 अथवा 16 मि.मी. की पी.वी.सी पार्श्वद्धलेटरल पाइप लाईनों मे प्रवेश करता है। लेटरल पाईप लाईनों पर प्रत्येक पौधे के थांवले मे लगे ड्रिपर या सूक्ष्म फव्वारों में से निकलकर पानी सीधा पौधों के जड़ क्षेत्र मे प्रवेश करता है तथा वाष्पीकरण से जल का ह्रास न्यूनतम होता है और अधिकतम जल पौधों द्वारा ही प्रयोग होता है। पौधे की आयु व बढ़वार

मिट्टी की सरंचना, जलवायु, पौधे की आवश्यकतानुसार व ड्रिपर या सूक्ष्म फव्वारों की प्रसाव क्षमता (लीटर प्रति घटां) के अनुसार ड्रिपर की संख्या प्रति पौधा 1 से 4 तथा सूक्ष्म फव्वारों की संख्या 1 से 2 रखी जाती है।

प्रथम 5 से 8 वर्ष तक ड्रिप (टपका-टपका) विधि तथा फलदार वृक्ष पूरे बड़े होने के बाद सूक्ष्म फव्वारा विधि ज्यादा लाभकारी है।

टपका-टपका व सूक्ष्म फव्वारा विधियों के लाभ :

- सर्वाधिक जल प्रयोग क्षमता।
- पानी की 35 से 60 प्रतिशत तक बचत।
- जड़ क्षेत्र मे निरन्तर समुचित नमी सुनिश्चित होने के कारण उत्पादन व गुणवत्ता में अप्रत्याशित वृद्धि।
- मिट्टी में नमी के उतार-चढ़ाव के फलस्वरूप फल-फूल गिरने या फटने की समस्या पर काफी हद तक नियन्त्रण।
- प्रतिदिन, एक दिन या अधिक अन्तराल पर सिंचाई देना सम्भव।
- एक साथ बडे क्षेत्र (20 एकड़ तक, मोटर की क्षमता के अनुरूप) पर सिंचाई सम्भव।
- सर्वोत्तम जड़ व शाकीय बढ़वार।

- वाष्पीकरण से पानी की न्यूनतम हानि (विशेषकर टपका-टपका प्रणाली में)।
- आवश्यकता अनुसार प्रति पौधा पानी की निर्धारित मात्रा देना सम्भव।
- सिंचाई के जल के साथ घुलनशील पोषक तत्वों व जमीन में मौजूद कीट, बीमारी, सूत्रकृमि, दीमक आदि के लिए कीटनाशक आदि की आपूर्ति सम्भव।
- फल, फूल व सब्जियों की भण्डारण क्षमता में सुधार।
- कम पानी से अधिक लाभ।
- मजदूरी की बचत।
- कीट व बिमारियों का कम प्रकोप।
- पहाड़ी व उंची-नीची भूमि पर बागवानी सम्भव।
- मिट्टी के कटाव की समस्या नहीं आती, विशेषकर रेतीले व असमतल क्षेत्रों में।

टपका-टपका व सूक्ष्म फव्वारा विधियों की सीमाएं :

- प्रति इकाई क्षेत्र अधिक आरम्भिक लागत।
- केवल प्रशिक्षित किसानों अथवा उद्यमियों द्वारा ही प्रयोग सम्भव।
- ड्रिपर व सूक्ष्म फव्वारों में खाद, मिट्टी आदि फसंकर बन्द होने की समस्या व समय-समय पर बार-बार साफ करने की आवश्यकता।

उपर्युक्त प्रणाली का सचांलन

ड्रिप व सूक्ष्म फव्वारों वाली लेटरल पाइपों को भूमिगत या उपर रखा जाता है। भूमिगत रखने पर ट्रैक्टर आदि चलाने के दौरान पाइपों के कटने की आशंका बनी रहती है। अतः उपर

रखना ही वांछित है। मानसून की अन्तिम वर्षा के साथ ही टपका-टपका अथवा सूक्ष्म फव्वारा सिंचाई आरम्भ कर देनी चाहिये। यदि किसी कारणवश मौनसून की वर्षा की समाप्ति या उसके बाद लम्बे समय तक यह प्रणाली शुरू न हो सकी हो तो बेसिन विधि से सिंचाई देने के बाद ही ड्रिप या सूक्ष्म फव्वारा प्रणाली से सिचांई आरम्भ करें। फसल व किस्म, जलवायु, मिट्टी सरंचना, पौधों की आयु आदि के अनुसार प्रतिदिन अथवा एक दिन छोड़कर इस विधि से सिंचाई आवश्यक है ताकि नमी का वांछित स्तर जड़ क्षेत्र मे निरतर बना रहे। भारतीय सन्दर्भ मे विभिन्न फल-फूल व सब्जियों के लिए टपका-टपका व सूक्ष्म फव्वारा विधि से सिंचाई के जल की मात्रा, सिंचाई के अन्तराल आदि पर अनुसन्धान कार्य प्रगति पर है तथा इस समय कुछ ही फलों के लिए तकनीक उपलब्ध है।

बागों में प्राकृतिक जल-संग्रहण

भारत के कुल शुष्क क्षेत्रफल का लगभग चार प्रतिशत (6755 हैक्टयेर) हरियाणा में मौजूद है। इस का अधिकतर भाग दक्षिण-पश्चिम के अन्तर्गत आता है। इस क्षेत्र की मिट्टी रेतीली तथा ज्यादातर भूमिगत जल खारा है जो कि आमतौर पर सिंचाई के प्रयोग में नहीं लाया जा सकता। नहरी जल सीमित मात्रा में उपलब्ध है। कुछ क्षेत्रों में अच्छे जल वाले टयूबवैल सिंचाई का मुख्य स्त्रोत हैं। इन क्षेत्रों के किसान बागवानी अपनाकर अपनी आय कई गुना बढ़ा सकते हैं, क्योंकि बागवानी से रोजगार के अवसर बढ़ते हैं और वर्ष भर निरन्तर आय होती है। कम उपजाऊ, लवणीय, अम्लीय तथा नकारा भूमि पर भी बागवानी अपनाकर अच्छी आय ली जा सकती है। शोध-कार्य से अब यह प्रमाणित हो गया है कि शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों में सीमित सिंचाई की दशा में अनेक प्रकार के फलों की बागवानी की जा सकती है जैसे आंवला, बेर, बेल, करौंदा, फालसा, बारामासी नींबू, शहतूत, लसोडा, अनार, पीलू, टींट, जामुन आदि। इस प्रकार के फलवृक्ष सामान्यत: सूखे, लवणता व क्षारीयता के प्रति सहनशील होते है। समुचित जल-प्रबन्ध अपनाकर इन फसलों के उत्पादन में और भी वृद्धि की जा सकती है।

शुष्क क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फलदार पौधों के गुण

दक्षिण-पश्चिमी हरियाणा के शुष्क क्षेत्रों में बागवानी के विकास के लिए उचित फलदार फसलों व उनकी किस्मों का चुनाव सबसे बडी प्राथमिकता है। चुनी गयी फसलों में निम्नलिखित गुण होने चाहिये।

अ) फलदार पौधों की बढ़वार के समय वांछित पानी उपलब्ध होना चाहिए।

ब) चूंकि शुष्क क्षेत्रों में सिंचाई के पानी की कमी होती है, इसलिए निम्नलिखित विशेषताओं वाले फलदार वृक्ष ही लगाएं।

1. जिनकी जडें जमीन में गहरी जाती हो ताकि जमीन गहरी सतह से भी पानी ले सके, जैसे बेर।
2. जो गर्मी में पत्ते झाड़ देते हों जैसे बेर, बेल, लसोड़ा आदि।
3. जिनके पत्तों में पानी बांधकर रखने की क्षमता हो जैसे अंजीर।
4. जिनमें सूखे की स्थिति के योग्य अन्य गुण हों जैसे पत्तों पर मोम जैसी परत होना, पत्तों पर बाल होना, धंसे या ढ़के स्टोमेटा होना, जो वाष्पोत्सर्जन को कम से कम रखते हैं जैसे बेर, फालसा व लसोड़ा।

स) शुष्क क्षेत्रीय फल लवणता व क्षारीयता के प्रति सहनशील होने चाहिए।

द) केवल ऐसे फल व किस्मों का चुनाव करें जिनकी फूल आने से फल पकने तक की अवधि कम से कम हो।

शुष्क क्षेत्रीय फलों में जल सग्रंहण

शुष्क क्षेत्रों में फल वृक्षों से समुचित पैदावार लेने के लिए जड़ क्षेत्र में पानी की उपलब्धता अनिवार्य है। इसे समय-2 पर सिंचाई द्वारा सुनिश्चित किया जाता है, परन्तु यदि सिंचाई के साधन सीमित हो या बिल्कुल न हो, तो इस आवश्यकता को प्राकृतिक जल-संग्रहण द्वारा पूरा किया जा सकता है। प्राकृतिक जल-संग्रहण का अर्थ है वर्षा के जल को इकट्ठा करके बाद में उसका फल-उत्पादन में उपयोग। प्राकृतिक जल-सग्रंहण की दो विधियां हैं।

क) अन्त:स्थानीय (इन-सीटू) जल-संग्रहण

इस विधि में वर्षा ऋतु आरम्भ होने से पूर्व, फलदार वृक्षों के चारों ओर 5-10 प्रतिशत ढ़लान (पौधों के मुख्य तनों की

ओर) बना दी जाती है जिसमें वर्षा का पानी सीधा पौधों के जड़ क्षेत्र मे प्रवेश करता है। इस प्रकार के संग्रहण से तभी लाभ होता है जबकि पौधे की बढ़वार, फूलने का समय, जल संग्रहण के समय के अनुरूप हो।

ख) स्थानेतर (एक्स-सीटू) जल-संग्रहण

इस विधि में वर्षा के जल को कच्चे या पक्के तालाब में एकत्रित कर लिया जाता है और बाद में फलों की आवश्यकतानुसार सिंचाई में प्रयोग किया जाता है। तालाब का आकार आवश्यकतानुसार रखा जाता है।

वर्षा ऋतु के समय पानी जमीन की गहरी परतों में चला जाता है। चूकिं शुष्क क्षेत्रों में मिट्टी रेतीली होती है, इसलिए इन क्षेत्रों में यह समस्या और भी विकट है। वर्षा का पानी सामान्यत: पौधें की भण्डारण क्षमता से कहीं अधिक होता है। प्राकृतिक जल-संग्रहण, पौधों की भण्डारण क्षमता से अधिक पानी की बर्बादी को रोकने का एक अति उत्तम उपाय है। एक अध्ययन के अनुसार बेर के बाग में पौधों के चारों ओर 10 प्रतिशत ढ़लान बनाने से जमीन की 3 मीटर परत में 500-600 मिलीमीटर नमी एकत्र हो जाती है।

जल-संग्रहण की तकनीक

बहुत कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी बहकर जाते हुए वर्षा के जल को कच्चे अथवा पक्के तालाब या नीचे स्थान पर एकत्रित किया जा सकता है ताकि बाद में इस पानी को फल उत्पादन में प्रयोग किया जा सके। जितना भी ढ़लान क्षेत्र (कैचमैंट एरिया) अधिक होगा, उतनी ही पैदावार अधिक होती है। जल संग्रहण की दो मुख्य विधियां है :-

क) कम क्षेत्र पर (माइक्रो प्लाट) संग्रहण

ख) अधिक क्षेत्र पर (मैक्रो प्लाट) संग्रहण

संग्रहण की विधि स्थान, मिट्टी, जलवायु तथा उगाये जाने वाले फलों पर निर्भर करती है। कोई भी विधि अपनाने से पहले निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिएं :-

- भूमि का ढ़लान।
- जलग्रहण क्षमता।
- जल बहकर जाने की प्राकृतिक दिशा।
- वर्षा की मात्रा एंव सम्भावना।
- जलवायु जैसे तापमान, धूप, हवा की दिशा व गति आदि।

क) सूक्ष्म प्लाट संग्रहण

सूक्ष्म-प्लाट जल-संग्रहण में प्राकृतिक या उपचारित तालाब से बहता हुआ पानी फल वृक्षों के नीचे मिट्टी की परत में जमा हो जाता है इसे दो प्रकार से किया जा सकता है :-

1. दो प्लाटों के बीच जल-संग्रहण
2. पौधों की दो कतारों के बीच जल-संग्रहण

सूक्ष्म-प्लाट जल-संग्रहण के लिए ढ़लान क्षेत्र का आकार

मिट्टी की सतह पर बह कर जाते हुए जल की मात्रा, वर्षा की अवधि व तीव्रता, ढ़लान क्षेत्र के आकार व बहाव की दूरी पर निर्भर करती है। सूक्ष्म-ढ़लान संग्रहण क्षेत्र का आकार, बाग मे लगे पौधों का फैलाव, जड़ों की गहराई तथा उनकी पानी की कुल जरूरत के अनुसार होना चाहिए। ढ़लान क्षेत्र ज्ञात करने का सूत्र इस प्रकार हैं :-

टी = एस = ए आर सी

टी = पौधों का फैलाव (वर्ग मीटर)

एस = वर्षा के बहे पानी की मात्रा जो पौधों को देनी है (मिली मीटर)

ए = प्रति पेड़ ढ़लान क्षेत्र (वर्ग मीटर में)

आर = औसत वार्षिक वर्षा

सी = बहाव गुणक

बहाव उत्पन्न करने की विधियां

बहाव उत्पन्न करने के लिए मिट्टी की सतह में कई प्रकार के परिवर्तन किए जा सकते हैं जैसे उगी हुई वनस्पति को साफ करना, ढ़लान तैयार करना, मिट्टी की सतह का चिकना व सख्त बनाना, विभिन्न रसायन जैसे सिलिकॉन, एस्फाल्ट, मोम व बिटुमिन आदि जो सतह को सील कर देते है और बहाव उत्पन्न करने मे मदद करते हैं, का प्रयोग करना। इसके अतिरिक्त पोलीथिन से मिट्टी की सतह को ढ़ककर बहाव उत्पन्न करना भी आम बात है।

ख) अधिक-क्षेत्र जल-संग्रहण

इस विधि मे जल एक तालाब आदि मे एकत्रित कर लिया जाता है। इस विधि का प्रयोग उन स्थानों पर अधिक लाभदायक है जहां वर्षा ऋतु मे प्राप्त जल की मात्रा पौधों की आवश्यकता से कही अधिक हो। बहकर नष्ट होने वाले जल

की मात्रा पौधों के पौधों के जड़ क्षेत्र की भण्डारण क्षमता से अधिक हो। वर्षा की तीव्रता मिट्टी में पानी के प्रवेश की दर से अधिक हो।

रेतीली मिट्टी पर बने कच्चे तालाब मे पानी का रिसाव एक गम्भीर समस्या है। अत: ऐसे क्षेत्रों मे वर्षा के जल के लिए पक्के तालाब अति उपयोगी सिद्ध हुए है। इन तालाबों से पानी को मोटर, इंजन आदि में उठाया जाता है।

बागों में नमी संरक्षण

फल-उत्पादन में सिंचाई के पानी एवं मिट्टी में नमी का संरक्षण अति महत्वपूर्ण व सर्वोपरि स्थान रखता है। यदि बागों में नमी संरक्षण पर समुचित ध्यान दिया जाए तो सिंचाई की आवश्यकता को काफी हद तक कम किया जा सकता है। बागों में नमी संरक्षण के वे सभी उपाय कारगर हैं जो मिट्टी के अन्दर मौजूद नमी को वाष्पीकरण द्वारा नष्ट होने से बचाने में सक्षम हों। मिट्टी में नमी भण्डारण क्षमता बढ़ाकर, अर्द्ध चन्द्रकार ड़ोल बनाकर और ढ़लान पर गड्ढ़े खोदकर तथा मिट्टी की उपरी सतह को मल्च द्वारा ढ़ांपकर मिट्टी में नमी संरक्षण सम्भव है।

अ) मिट्टी की सतह को ढ़ापंना (मल्चिंग)

मल्चिंग के लिए अनेक प्रकार की वस्तुएं प्रयोग मे लाई जाती हैं जैसे घास-फूस, पौधों के पत्ते व तने, मिट्टी की परत बिछाकर तथा पोलीथीन (300 गेज़) की चादर बिछाकर। इन सब में से काली पोलीथीन की चादर उत्तम पाई गई है। परन्तु यह बहुत महंगी है। सभी "मल्च" नमी संरक्षण के अतिरिक्त खरपतवार नियंत्रण व पोषक तत्वों की बर्बादी को कम करने में भी सहायक है। इसके अलावा घास-फूस व भूसा वाले "मल्च" मिट्टी में जैविक-पदार्थ भी बढ़ाते हैं।

ब) मिट्टी की नमी भंडारण-क्षमता बढ़ाना

रेतीली मिट्टी होने की अवस्था मे पानी का रिसाव अत्यधिक होता है। इसे मिट्टी की जल-भण्डारण क्षमता बढ़ाकर नियंत्रित किया जा सकता है। मिट्टी की नमी-भण्डारण क्षमता बढ़ाने के लिए निम्नलिखित उपाय हैं :-

1. जैविक पदार्थ बढ़ाकर इसके लिए प्रचुर मात्रा में देसी खाद, हरी खाद व केंचुआ खाद का प्रयोग करना चाहिए।
2. चिकनी (जोहड़-तालाब की) मिट्टी डालकर।
3. मिट्टी की ऊपरी सतह पर ऐसे पदार्थ डालकर जो पानी को जल्दी से नीचे न रिसने दे जैसे बैन्टोनाइट-क्ले (10-15 टन प्रति हैक्टयर) डालकर।
4. देसी खाद तथा वरमिकुलाईट डालकर भी मिट्टी की नमी भण्डारण क्षमता बढ़ाई जा सकती है।

स) अर्द्ध-चन्द्राकार डोल बनाना व ढ़लान पर गड्ढ़े खोदना

इस विधि में 6 से 13 मीटर की व्यास अर्द्ध चन्द्राकार डोल बनाई जाती है जो पौधों के फैलाव पर निर्भर करती है। साथ ही ढ़लान के ऊपरी सिरे पर गड्ढ़ेदिए जाते हैं। पौधे अर्द्ध चन्द्राकार डोल के मध्य मे लगाये जाते हैं। अर्द्ध चन्द्राकार डोल मे पानी इकट्ठा होने मे सहायता करती है और गड्ढ़ें के पानी को सुरक्षित रखते हैं। जैसे ही पुराने गड्ढ़े भर जाते हैं, नए गड्ढ़े खोद दिए जाते हैं।

द) निराई-गुड़ाई द्वारा

प्रत्येक सिंचाई अथवा प्रभावी वर्षा के बाद पौधों की निराई-गुड़ाई करने से मिट्टी में नमी संरक्षण में मदद मिलती है। साथ ही पौधों में बेहतर वायु संचार भी सुनिश्चित होता है।

फलित पौधों की सिंचाई

फल का नाम व सिंचाई सम्बंधी सिफारिशें

आम :

फलित पौधों की 10-15 दिन के अंतराल पर सिंचाई अति आवश्यक है। विशेषकर फल बढ़वार के दौरान इससे फल गिरने की समस्या कम आती है तथा फलों का आकार

बढ़ाने में भी मदद मिलती है। इसके अतिरिक्त अगले वर्ष में अच्छे फूलने फलने के लिए, फूलने से 2-3 मास पूर्व सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए अन्यथा पौधों में केवल शाकीय बढ़वार होगी व फूल कम आयेगें।

नींबू :

नींबूवर्गीय फलों में सिंचाई बहुत महत्व रखती है और फलों की पैदावार एवं गुणवत्ता में अहम भूमिका अदा करती है। इस वर्ग के फलों की सिंचाई के संदर्भ में निम्नलिखित बातों पर गौर करना अति आवश्यक है।

- नीबूवर्गीय फलदार पौधों की जड़ें मिट्टी में केवल 60-75 सैं.मी. की गहराई तक जाती है परन्तु इनकी जड़ों का फैलाव, पौधों के वास्तविक फैलाव से कहीं अधिक होता है। इसलिए जड़ क्षेत्र तक सिंचाई के पानी का पहुंचना निहायत जरूरी है।
- नींबूवर्गीय फल शाकीय बढ़वार, फूलने व फलने के दौरान सिंचाई के प्रति सचेतन हैं। यदि इस दौरान जड़ क्षेत्र में नमी की कमी हुई तो फल-उत्पादन व फलों की गुणवत्ता पर विपरीत असर पड़ना निश्चित है।
- उपर्युक्त बातों के विपरीत, नीबूवर्गीय फल अत्यधिक नमी तथा खड़े पानी को सहन नहीं कर सकते क्योंकि इससे जड़ श्वसन दर कम होती है जिससे पौधों की शाकीय बढ़वार व पैदावार कम होती है तथा जड़ गलन की बिमारियों का प्रकोप बढ़ जाता है। इस वर्ग के पौधे लवणता के प्रति अति सचेतन हैं और सिंचाई के लिए प्रयोग किये जाने वाले पानी में कुल घुलित लवणीय तत्व 1000 पी.पी.एम. से ज्यादा नहीं होने चाहिएं। नींबूवर्गीय फलों में अत्यधिक सिंचाई से "स्ट्रिप्स डिक्लाइन" नामक समस्या गम्भीर हो जाती है।

- सिंचाई का जल नींबूवर्गीय पौधों के मुख्य तने के सीधे सम्पर्क में नहीं आना चाहिए अन्यथा जड़ गलन व पद गलन बिमारियों का प्रकोप होता है। इस समस्या के निवारण के लिए पौधों के मुख्य तनों के चारों ओर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।
- पौधों में नई पत्ती निकलने से पहले (फरवरी-मार्च से पहले), फल बढ़वार के दौरान (अप्रैल-जुलाई) और मध्य सितम्बर से अक्तूबर के अन्त तक सिंचाई करना अति लाभप्रद है। आमतौर पर फूल पौधों को सर्दी में 15-20 दिन व गर्मी में 10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई देनी चाहिए।

पपीता :

पपीते के पौधे खेत में लगाने के तुरन्त बाद निरन्तर सिंचाई आवश्यक है क्योंकि पपीते में फूलना-फलना वर्ष भर निरन्तर जारी रहता है, इसलिए इसे वर्षा काल को छोड़कर पूरे वर्ष सिंचाई की जरूरत पड़ती है। गर्मियों में एक सप्ताह व सर्दियों में 2-3 सप्ताह के अन्तराल पर सिंचाई समुचित समझी जाती है। यह ध्यान रहे कि सिंचाई का पानी पपीते के मुख्य तने के सम्पर्क में सीधे न आए अन्यथा जड़ व पद गलन जैसी बिमारियों का प्रकोप बढ़ता है।

लीची :

छोटे पौधों की सिंचाई एक सप्ताह में दो बार करनी चाहिए। फल बढ़वार के दौरान सिंचाई 10-11 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए। इससे फल फटने की समस्या नहीं आती और फल का आकार भी बढ़ता है।

आडू :

आडू के छोटे पौधों को 1-2 वर्ष तक 8-10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई देनी चाहिए। समशीतोष्ण क्षेत्रों में

अर्ध-उष्ण क्षेत्रों की तुलना में पौधों को कम सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। आडू दूसरे से तीसरे वर्ष में ही फलित हो जाता है। अतः फलित होने के बाद पूर्ण फूलन से लेकर फल परिपक्वता तक 15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई अति अनिवार्य है वरना फलों की पैदावार व गुणवत्ता पर विपरीत असर पड़ता है।

आलूबुखारा :

आडू में दिये गये विवरण को देखें।

नाशपाती :

नाशपाती में भी आडू व आलुबुखारा की भांति सिंचाई की जरूरत होती है परन्तु पूर्ण फूलन से लेकर फल परिपक्वता तक अधिक समय होने के कारण सिंचाईयों की संख्या अधिक होती है।

बेर :

बेर एक अति सूखा सहनशील फलदार वृक्ष है जो लवणता व लवणीय पानी के प्रति भी सहनशील है। मूसला जड़धारी पौधा होने के कारण इसकी जड़ें काफी गहराई तक जाती हैं तथा स्थापित होने के बाद इसे बहुत कम सिंचाई की आवश्यकता होती है। फलित पौधों के लिए वर्ष भर में चार सिंचाई पर्याप्त रहती हैं। पहली सिंचाई जून-जुलाई में कांट-छांट के बाद, दूसरी सिंचाई नवम्बर माह में जब बेर मटर के दाने के बराबर हो जाये व तीसरी तथा चौथी सिंचाई जनवरी में करनी चाहिए। फूलन के दौरान सिंचाई नहीं करनी चाहिए।

आंवला :

आंवला सूखा, लवणता, क्षारीयता तथा अत्यधिक सोडियम के प्रति अति सहनशील है। इसमें फूलन मार्च-अप्रैल में होता है और फलन के बाद फल जून तक सुप्त रहता है। इसलिए इस दौरान इसे सिंचाई की आवश्यकता नहीं रहती। वर्षा ऋतु के आगमन के साथ ही फलों की बढ़वार आरम्भ हो जाती है और फल नवम्बर-दिसम्बर तक पक कर तैयार हो जाते है। इसलिए आमतौर पर अच्छी वर्षा होने की स्थिति में इसे सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। फिर भी फल की बढ़वार के दौरान 2-3 सिंचाई करने से फलों की पैदावार व गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

फालसा :

फालसा अति सूखा सहनशील फल है और इसकी फूलन से फल परिपक्व होने तक की अवधि बहुत कम है। फल मध्य मई से मध्य जून तक पककर तैयार हो जाते हैं। इसलिए फालसा को केवल इसी दौरान 1-2 सिंचाई की जरूरत होती है। सर्द ऋतु में यह सुप्त अवस्था में रहता है और कांट-छांट तक किसी प्रकार की सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। कांट-छांट के तुरन्त बाद खाद डालने के साथ-साथ फरवरी के दूसरे से तीसरे सप्ताह में सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

अमरूद :

फलित पौधों को गर्मी में 8 से 10 दिन व सर्दी में 5 से 20 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करें। फलन से लेकर फल परिपक्वता तक निरन्तर एक सप्ताह के अन्तराल पर सिंचाई देनी चाहिए। अमरूद के लिए प्रयोग किया जा सकता है। वर्षा ऋतु की फसल न लेने के लिए फरवरी से मई तक सिंचाई बन्द कर दें।

बेल :

यह सूखा तथा लवणता सहनशील फलदार वृक्ष है और शुष्क क्षेत्रीय बागवानी के लिए अति उत्तम है। इसका फूलन एवं फलन समय वर्षा ऋतु के साथ ही आता है तथा फल पककर मई-जून में तैयार हो जाते हैं अत: फूलन व फलन के दौरान इसे सिंचाई की कोई आवश्कता नहीं होती। वर्षा ऋतु के बाद से लेकर फल पकने तक कई अवस्थाओं पर फल गिरने व फटने की समस्या आती है इसलिए इस दौरान आवश्यकतानुसार सिंचाई करना लाभप्रद है।

अनार :

यद्यपि अनार मिट्टी व वायुमण्डल की नमी में उतार-चढ़ाव के प्रति सहनशील नहीं है। इसलिए फल फटने की समस्या ज्यादा होती है लेकिन शुष्क क्षेत्रों में यह समस्या इतनी गम्भीर नहीं होती।

3. निराई-गुड़ाई

छोटे पौधों में प्रथम 2-3 वर्ष तक 15-30 दिन में एक बार निराई-गुड़ाई करे ताकि खरपतवार नियन्त्रण के साथ-साथ जड़ो तक उत्तम वायु संचार भी हो।

4. सिधाई

क) सदाबहार फलदार वृक्षों की सिधाई एवं कांट-छांट :

1. छोटे पौधों की सिधाई

सदाबहार फलों में आम, सन्तरा, माल्टा, नींबू, लीची, लौकाट, चीकू, पपीता, खजूर, बेर, बेल आदि प्रमुख हैं। इन सभी में आरम्भ के 2-3 वर्षों में जो शाखाएँ निकलती हैं वे पतली और कमजोर होती हैं तथा नीचे झुकी रहती हैं। इन फलों में इस समस्या के समाधान के लिए नर्सरी से पौधे को बाग में लगाने के बाद जमीन से 50-60 सैं.मी. ऊपर से काट देते हैं और नये फुटावों में से 3-4 फुटाव उचित दूरी पर रखे जाते हैं। इसके अतिरिक्त बाकी शाखाएँ निकाल दी जाती हैं। मूलवृन्त से निकलने वाली सभी टहनियों को समय-समय पर निकालते रहना चाहिए।

ख) फलित पौधों की कटाई-छंटाई

पतझड़ी पौधों की तरह सदाबहार पौधों के लिए कांट-छांट का कोई विशेष नियम नहीं है सिंवाय कुद फल वृक्षों के जैसे बेर, लीची आदि। इन फलवृक्षों में कांट-छांट कार्य सूखी, रोगग्रस्त, नीचे झुकी व जमीन को छूती हुई टहनियाँ/शाखाओं को काटने तक सीमित है। यह कार्य फलों की तुड़ाई के तुरन्त बाद या फिर बसन्त ऋतु में नई बढ़वार शुरू होने से पहले किया जाता है। टहनियों को मुख्य शाखा के समीप से काटा

जाता है व इसका कोई भाग शेष नहीं छोड़ा जाता। एक इंच से बड़े सभी कटे हुए सिरों पर बोर्डो पेस्ट का लेप करना चाहिए ताकि कटे सिरों को गलने या फफूंदी आदि के आक्रमण से बचाया जा सके। अलग-अलग सदाबहार फसलों में कांट-छांट की सिफारिश इस प्रकार है।

आम :

आमतौर पर आम के पौधों को प्राकृतिक रूप से बढ़ने दिया जाता है तथा कांट-छांट की भी विशेष आवश्यकता नहीं होती। केवल सूखी, बीमार या गुच्छा-मुच्छा रोग से प्रभावित शाखाओं/टहनियों को काटा जाता है।

लीची और लौकाट :

इनमें भी सूखी और रोगग्रस्त टहनियों को निकाला जाता है। इसके अतिरिक्त पके हुए फलों को शाखाओं के कुछ भाग के साथ तोड़ा जाता है जो कांट-छांट का कार्य करती हैं और नई बढ़वार को प्रोत्साहन देती हैं।

अमरूद :

अमरूद के पेबन्द पौधों से बाद में लगाने के बाद पेबन्द जोड़ के नीचे से फुटाव निकलते हैं जिन्हें निरन्तर काटते रहना आवश्यक है। प्रथम 1-2 वर्ष तक मुख्य तने से निकलने वाली शाखाओं को बढ़ने दिया जाता है और दूसरे या तीसरे साल इन्हें काट दिया जाता है। इसके बाद 4-5 नई शाखाओं को उचित दूरी पर रखा जाता है तथा शेष सभी को काट दिया जाता है। तीसरे से चौथे वर्ष मुख्य तने पर निकलने वाली शाखाओं को काट दिया जाता है ताकि प्रकाश पौधे के अन्दर तक प्रवेश कर सके। चार से पांच वर्ष की आयु तक मुख्य शाखाओं से निकलने वाली टहनियों को काटा जाता है। इसके अतिरिक्त सभी सूखी व टूटी टहनियों को निरन्तर काटते रहना चाहिए। यदि पौधे अचानक पैदावार कम देने लगे तथा ऊपर से सूखने लगे तो सभी मुख्य शाखाओं को मुख्य तने से 75-100 सैं.मी. ऊपर से काट दिया जाता है। यह कार्य फरवरी-मार्च के दौरान करना चाहिए। इसके बाद इन्हें पर्याप्त खाद, उर्वरक व सिंचाई देनी चाहिए। ऐसा करने पर ये फिर भरपूर पैदावार देना आरम्भ कर देते हैं।

बेर :

बेर में प्रतिवर्ष अत्यधिक बढ़वार होती है और शाखाओं के कमजोर होने के कारण वे झुककर जमीन पर टिक जाती हैं। इसलिए पहले 2-3 वर्ष में 4-5 मुख्य शाखाऐं उचित दूरी पर जमीन से 90-100 सैं.मी. ऊपर मुख्य तने के चारों ओर रखनी चाहिए ताकि पौधों का एक मजबूत ढ़ांचा तैयार हो सके। नर्सरी में पेबन्द पौधों को सहारा देना चाहिए क्योंकि बेर के अधिकतर फल नई टहनियों पर पतों के बगल में लगते हैं इसलिए वार्षिक काट-छांट अति आवश्यक है।

काट-छांट का उत्तम समय उत्तरी भारत में 15-30 मई तथा दक्षिणी भारत में फरवरी-मार्च है। चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल पर किए गये शोध कार्य से पता चलता है कि बेर की एक वर्ष पुरानी टहनियों/शाखाओं को 6 द्वितीय के बाद काट देना चाहिए। इसके अतिरिक्त जहाँ कहीं भी शाखाओं की भीड़ हो तो कुछ शाखाओं को पूरी तरी तरह निकाल देना चाहिए। प्रत्येक चार से पाँच वर्ष के बाद मुख्य शाखाओं को तीन-चौथाई काटना चाहिए।

नींबूवर्गीय फल :

नर्सरी अवस्था से ही मूलवृन्त से निकलने वाली सभी शाखाओं को काटते रहना चाहिए। आरम्भिक अवस्था में लगने वाले फलों को तोड़ते रहना चाहिए। बड़े नींबूवर्गीय फलवृक्षों को कांट-छांट की विशेष आवश्यकता नहीं होती। केवल बारामासी नींबू और किन्नों को कांट-छांट की आवश्यकता होती है। क्योंकि इन दोनों में अनेक पतली-पतली कमजोर

टहनियाँ निकलती हैं जो कोई फल नहीं देती और फलित टहनियों के साथ दखलन्दाजी करती हैं। पौधों के केन्द्र में शाखाओं की भीड़ हो जाती है जिससे नीचे की टहनियों को धूप नहीं मिलती। इन शाखाओं का एक-तिहाई से दो-तिहाई भाग काट देना चाहिए। इसके अतिरिक्त सूखी, रोगी, टूटी तथा जमीन को छूती शाखाओं को फल तोड़ने के बाद दिसम्बर-जनवरी में निकाल देना चाहिए।

इसी तरह अन्य सदाबहार पौधों में भी कांट-छांट का कार्य सूखी, रोगी, झुकी हुई व एक-दूसरे में उलझी टहनियाँ निकालने तक सीमित होता है।

फालसा :

फालसा में जमीन की सतह से ही अनेक तने निकलते हैं और सभी फल देते हैं क्योंकि नई शाखाएँ ही फल देती हैं अतः वार्षिक कांट-छांट अनिवार्य है। फालसा में कांट- छांट का उत्तर समय 15 दिसम्बर से 15 जनवरी है। फालसा की बौनी किस्म की कटाई जमीन से 30-40 सैं.मी. ऊपर से आधा काट

देना चाहिए। इसके साथ-साथ 30-40 प्रतिशत शाखाओं को पूरी तरह निकाल दिया जाता है।

नाशपाती :

आमतौर पर नाशपाती के पेड़ों की सिघाई मोडिफाईड लीडर विधि से की जाती है। इस विधि में सैन्ट्रल लीडर को 90-120 सैं.मी. की ऊँचाई पर काट दिया जाता है। द्वितीय वर्ष में पेड़ के केन्द्र से निकलने वाली सबसे बड़ी शाखा को रख लिया जाता है और इसके अतिरिक्त पेड़ के चारों ओर 10-15 सैं.मी. की दूरी पर 4-5 पार्श्व शाखाएँ रखी जाती हैं। द्वितीय वर्ष में रखी गई पार्श्व शाखाओं से तृतीय व चतुर्थ वर्ष में और पार्श्व शाखाएँ निकलेंगी जिनमें से दो को रखकर शेष सभी को निकाल दिया जाता है। इस प्रकार तृतीय व चतुर्थ वर्ष में निकलने वाली पार्श्व शाखाएँ द्वितीय शाखाएँ कहलाएगी। पाँचवें वर्ष की काट-छांट के समय सैंट्रल लीडर को बाहर की तरह बढ़वार प्रेरित करते हुए काट दिया जाता है।

फलित पौधों की काट-छांट

नाशपाती के फल छोटी-छोटी टहनियों पर लगते हैं जिन्हें स्पर कहते है।। ये बहुत धीरे-धीरे बढ़ते हैं व परिपक्व होने में 2-5 वर्ष लेते हैं व 10-15 वर्ष तक फल देते हैं। अतः पहले 10-15 वर्ष पौधों को अधिक कांट-छांट की आवश्कता नहीं होती। कमजोर, रोगी व एक दूसरे में फँसी हुई शाखाओं को निरन्तर निकालते रहना चाहिए। पुराने वृक्षों को नवीनीकरण तथा अधिकतम फलित शाखाएँ प्राप्त करने के लिए अधिक कांट-छांट की जरूरत पड़ती है। इसके लिए बड़ी-बड़ी शाखाएँ पूरी तरह निकाल दी जाती हैं जिससे सूर्य की रोशनी वृक्ष के केन्द्र में भी प्रवेश करती है और साथ ही नये स्पर भी निकलते हैं जो फिर 10-15 वर्ष तक फल देते हैं। कांट-छांट व फल तोड़ते समय स्पर को नुकसान नहीं होना चाहिए। नाशपाती की कांट-छांट का उत्तम समय फरवरी है।

आडू :

आडू की सिधाई भी मोडिफाइड लीडर विधि से की जाती है जिससे सेन्ट्रल लीडर को करीब 1 मीटर की ऊँचाई पर काट दिया जाता है। साथ-साथ सभी शाखाएं भी काट दी जाती हैं। यह कार्य खेत मे पौधे लगाते समय ही कर देना चाहिए। इसके बाद केवल 4-5 शाखांए जो पेड़ के चारों ओर उचित दूरी पर रखी जाती हैं, शेष सभी शाखाओं को निकाल दिया जाता है।

सबसे नीचे वाली शाखा जमीन से कम से कम 40-50 सैं.मी. ऊपर होनी चाहिए। द्वितीय वर्ष में सेंट्रल लीडर को बढ़ने दिया जाता है तथा पार्श्व शाखाओं की अत्यधिक संख्या को कम कर दिया जाता है। तृतीय वर्ष में सेन्ट्रल लीडर को पार्श्व शाखा के रूप में फिर काट दिया जाता है। आड़ू के फल एक वर्ष पुरानी शाखाओं पर लगते हैं। अत: वार्षिक काट-छांट अति अनिवार्य है। आड़ू की काट-छांट का उत्तम समय 25 दिसम्बर से 15 जनवरी है। एक वर्ष पुरानी शाखाओं में से 40 प्रतिशत को पूरी तरह निकाल दिया जाता है व शेष सभी शाखाओं का 30-40 प्रतिशत भाग काट दिया जाता है।

आलूबुखारा :

आलूबुखारा की सिधाई भी आड़ू की तरह ही की जाती है। सेन्ट्रल लीडर को पौधे खेत मे लगते समय ही जमीन से एक मीटर ऊपर काट दिया जाता है। द्वितीय वर्ष की कांट-छांट के समय अनेक पार्श्व शाखाओं में से केवल चार शाखाएं रखकर शेष सभी को काट दिया जाता है ताकि पौधों का उचित ढ़ांचा तैयार हो जाये। तृतीय एवं चतुर्थ वर्ष में पार्श्व शाखाओं को सन्तुलित अनुपात में रखा जाता है और अनचाही शाखाओं को निकाल देना चाहिए। पाँचवे वर्ष में सेंट्रल लीडर को उचित स्थान से एक पार्श्व शाखा के रूप में काट देना चाहिए। आड़ू की भांति आलूबुखारा भी एक वर्ष पुरानी शाखाओं व स्पर पर फल देता है। अत: जनवरी मास में प्रतिवर्ष हल्की कटाई करनी चाहिए। कमजोर, सूखी, रोगग्रस्त व एक दूसरे में फँसी सभी शाखाएं निकाल देनी चाहिए। मुख्य तने से निकलने वाली सभी शाखाएं निरन्तर काटते रहना आवश्यक है।

फलदार पौधों की काट-छांट के समय सावधानियाँ

1. फलदार वृक्षों की काट-छांट केवल तेज धारदार/दांतेदार सकेटियर अथवा आरी से ही करनी चाहिए।
2. फलदार वृक्षों में काट-छांट का कार्य सही समय पर करना चाहिए।
3. प्रत्येक फलदार वृक्ष की आवश्यकतानुसार काट-छांट की तीव्रता का विशेष ध्यान रखना चाहिए।
4. काट-छांट साफ होनी चाहिए व शाखाओं का छिलका नही उतरना चाहिए।
5. 2.5 सैं.मी. से बड़े सभी कटे सिरों को 2 किलोग्राम कॉपर सल्फेट, 3 किलोग्राम चूना, 15 लीटर पानी (बोड़ो मिश्रण) की पेस्ट से ढ़क देना चाहिए।
5. फलदार पौधों का सर्दी व गर्मी से बचाव।

सभी प्रकार की जलवायु में पौधों को गर्मी या सर्दी से बचाने की आवश्यकता पड़ती है। समशीतोष्ण जलवायु जैसे जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों में सर्दियों में तापमान का शून्य से नीचे जाना आम बात है। ऐसी अवस्था में फलदार वृक्षों को सर्दी से बचाना अनिवार्य है अन्यथा पौधे मर सकते हैं। इसी प्रकार अर्ध-उष्ण क्षेत्रों जैसे उत्तर-पश्चिमी भारत के मैदानी भाग में सर्द ऋतु में पौधों को सर्दी से बचाना अनिवार्य है। अर्ध-उष्ण तथा विशेषकर उष्ण क्षेत्रों में पौधों को अत्यधिक तापमान के कारण गर्मी से बचाना अति अनिवार्य है, विशेषकर मई-जून के माह में। रेतीले क्षेत्रों में यह समस्या और भी गंभीर हो जाती है। बड़े पौधों की तुलना में छोटे पौधों पर अत्यधिक कम और अधिक तापमान के साथ गर्मी में गर्म तेज लू तथा सर्दी मे शीतलहर का प्रकोप अधिक होता है। फलदार पौधों के अत्यधिक गर्मी तथा सर्दी से बचने के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं।

क) वायुरोधक पौधे लगाना

बाग की उत्तरी व पश्चिमी सीमा पर वायुरोधक पौधे लगाकर गर्म हवा तथा शीतलहर से पौधों को बचाया जा सकता है। इससे बाग के अन्दर तापमान नियंत्रित रखने में भी कुछ हद तक सफलता मिलती है। जामुन, देसी आम, सिल्वर ऑक, अर्जुन, शीशम, शहतूत आदि वायुरोधक पौधे बाग मे फलदार पौधे लगाने से पूर्व ही लगा देने चाहिएं।

ख) पौधों को ढ़क कर

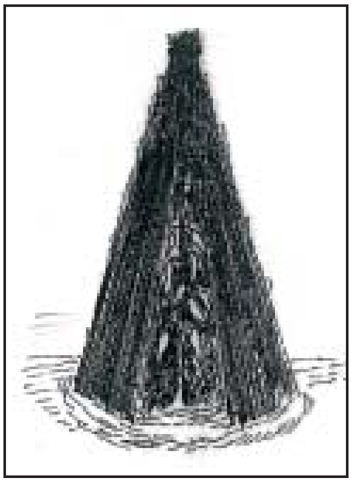

छोटे पौधों को सूखे सरकण्डे, मक्का, बाजरा, खजूर के पत्तों आदि से ढ़क कर भी गर्म लू, पाले तथा शीतलहर से बचा सकते हैं। पौधों के चारों ओर चार लकड़ी गाड़कर ऊपर पत्ते, फूॅस, सरकण्डे तथा बाजरे आदि की सूखी कड़वी से झोंपड़ी बना देते हैंऔर चारों दिशाएँ खुली रहती हैं। दूसरे तरीके में पौधों को तीन दिशाओं से ऊपर से पूरी तरह ढ़क दिया जाता है और दक्षिण-पूर्वी दिशा हवा तथा रोशनी के लिए खुली रखी जाती है।

ग) पौधों के मुख्य तने ढाँपना

फलदार पौधों विशेषकर नींबूवर्गीय फलदार वृक्षों को गर्मी व सर्दी से बचाने के लिए बाजरे, मक्का, ज्वार आदि की सूखी कड़बी (तने) से ढ़क दिया जाता है।

घ) सफेदी द्वारा

पौधों को गर्मी में तेज धूप व अधिक ताप से बचाने के लिए वृक्ष के मुख्य तनों पर साल मे दो बार मार्च-अप्रैल तथा सितम्बर-अक्तूबर में सफेदी कर देते हैं।

ड) पानी का छिड़काव करना

प्रात:काल में पौधों पर पानी का छिड़काव करके भी उन्हें गर्मी से बचाया जा सकता है।

च) छायादार पौधे उगाना

छोटे फलदार पौधों के इर्द-गिर्द अरहर, जन्तर आदि उगाकर उन्हें छाया प्रदान की जा सकती है। ग्रीष्म ऋतु आरम्भ होने से 1-2 मास पूर्व छायादार पौधे बो देने चाहिए।

छ) बाग के बीच आग जलाकर

सर्दियों में शाम के समय बाग के बीच जगह-जगह पर सूखी लकड़ी, पत्ते आदि जलाकर बाग के तापमान को 4-5 सैंटीग्रेड तक बढ़ाया जा सकता है। यह प्रक्रिया विशेषकर उन रातों को अपनाई जाती है जब पाला (कोहरा) पड़ने के आसार नजर आएं।

ज) पोलीथीन से ढ़कना

छोटे पौधों को पोलीथीन की चादर से ढ़ककर उन्हे सर्दी से बचाया जा सकता है। पोलीथीन की चादर अन्दर का तापमान बढ़ा देती है।

झ) सिंचाई

फलदार पौधों को सर्दी व गर्मी से बचाने के लिए सिंचाई सबसे आसान तथा प्रचलित विधि है। इससे बाग की मिट्‌टी का तापमान सर्दी में बढ़ता है व गर्मी में घटता है। स्प्रिंकलर सिंचाई पाले से पौधों को बचाने में अति प्रभावी है।

पौध प्रवर्धन

फलों में पौध प्रवर्धन के लिए दो मुख्य विधियां हैं। प्रथम - बीज द्वारा, दूसरा - शकीय प्रवर्धन। शकीय प्रवर्धन की अनेक विधियां हैं जैसे कलम द्वारा, बडिंग द्वारा, ग्राफ्टिंग द्वारा, लेयरिंग द्वारा। जिन पौधों में कलम चढ़ाना अनिवार्य होता है, उनके लिए पहले मूलवृन्त के लिए उपयुक्त किस्म अथवा नस्ल के बीज बोकर पौधे तैयार किये जाते हैं। बीजों को 9" x 4" की पॉलीथीन की थैलियों अथवा क्यारियों में बीज से बीज 15 सैं.मी. व पंक्तियों के बीच 30 सैं.मी. फासला रखते हुए बोएं। थैलियों को 1 : 1 : 1 में चिकनी मिट्‌टी, बालू रेत एवं देसी खाद के मिश्रण से भरें। क्यारियों को भी प्रचुर मात्रा में देसी खाद डालकर अच्छी तरह तैयार करना चाहिए। बीज बोने के लिए विभिन्न फलों के लिए समय भिन्न-2 है। मूलवृन्त द्वारा पैन्सिल मोटाई ग्रहण करने के समुचित विधि से चश्मा चढ़ाना चाहिए है। चश्मा चढ़ाते समय ध्यान रहे कि मूलवृन्त व मातृशाखा की मोटाई समान हो। कुछ पौधों जैसे बेर में 'इन सीटू बडिंग' कहीं ज्यादा कारगर है। वर्षा ऋतु में कलमी पौधों का खेत में रोपण करने से पहले पत्तियां तोड़ने से सफलता दर बढ़ जाती है।

बागवानी में विभिन्न सस्य क्रियाएं

खाद एवं उर्वरक

एक वर्ष से कम आयु के पौधों को कोई खाद या उर्वरक न दे। एक वर्ष से उपर के पौधों के लिए मात्रा पौधे की आयु अनुसार दस वर्ष तक बढ़ाते रहें व तत्पश्चात उतनी ही मात्रा प्रतिवर्ष देनी चाहिए। नाइट्रोजन की आवश्यकता शाकीय बढ़्वार में ज्यादा होती है इसलिए नाइट्रोजन शाकीय बढ़वार व फूलन आरम्भ होने से 10-15 दिन पूर्व डालनी चाहिए। फलवृक्षों में

नाइट्रोजन की जरूरत काफी अधिक मात्रा में होती है। इसलिए इसे दो से तीन भागों में बांटकर डालना चाहिए। फास्फोरस पानी में घुलकर एक स्थान से दूसरे स्थान (जड़) तक शीघ्रता से नहीं जाता इसलिए इसे नाइट्रोजन की पहली मात्रा के साथ आरम्भ में ही डाल दिया जाता है ताकि यह पौधे को धीरे-धीरे मिलती रहे। जैसा कि सर्व विदित है कि पोटाशियम फलों का आकार, रंग, गुणवत्ता व भण्डारण क्षमता में सुधार करता है इसलिए इसका प्रयोग आमतौर पर शाकिय बढ़वार आरम्भ होने से पहले नत्रजन के साथ ही किया जाता हैंइसके अतिरिक्त इसका प्रयोग फल पकने से 30-40 दिन पूर्व भी किया जा सकता है। जैविक/देसी खाद बसन्त ऋतु मे नई बढ़वार शुरू होने से पहले या वर्षा ऋतु के आरम्भ होते ही डाली जाती है। सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग फल व सूक्ष्म तत्वों की कमी के लक्षणों की तीव्रता के आधार पर किया जाता है। यदि कमी के लक्षण आरम्भिक अवस्था में हो तो तुरन्त एक छिड़काव कर देना चाहिए। अत्यधिक कमी के लक्षण मिलने की अवस्था में 3-4 छिड़काव करने चाहिए। मिट्टी में सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग अन्य रासायनिक उर्वरकों के साथ किया जाता है। शुद्ध सूक्ष्म तत्व

या फिर चिलेटिड सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग किया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक डालने का तरीका

फलदार पौधों में खाद व उर्वरक डालने की निम्नलिखित विधियाँ हैं।

क) पट्टी या पतली नाली में डालना (Band Strip placement)

ख) बिखेरना (Brodcasting)

ग) छिड़काव करना (Foliar Spray)

क) पट्टी या पतली नाली में डालना :

इस विधि में उर्वरकों को एक पट्टी या कम चौड़ाई वाली नाली में पौधों के चारों ओर डाल दिया जाता है। यह विधि जब अपनाई जाती है तब छोटे पौधों को उर्वरकों की थोड़ी-थोड़ी मात्रा देनी हो या फिर फास्फोरस व पोटाश खाद सीधे जड़क्षेत्र में डालनी हो। कम विकसित जड़ वाले पौधों को भी इस विधि से उर्वरक दिये जाते हैं।

ख) बिखेरना :

इस विधि से खाद व उर्वरकों को पौधों के नीचे एक समान बिखेर दिया जाता है। इस विधि से बड़े (फल देने वाले) या कम दूरी पर लगाये गये पौधों को खाद व उर्वरक देते हैं।

ग) पौधों पर छिड़काव करना :

इस विधि में पोषक तत्वों का पौधों पर मशीन द्वारा छिड़काव किया जाता है। यह विधि आमतौर पर सूक्ष्म तत्वों के लिये प्रयोग की जाती हे या फिर उन तत्वों के लिये जो मिट्टी में डालने पर पौधों को देरी से उपलब्ध होते हैं। शुष्क क्षेत्रों में पोषक तत्वों का छिड़काव आमतौर पर किया जाता है क्योंकि वर्षा ऋतु के बाद सिंचाई के साधन सीमित होते हैं।

खाद एवं उर्वरक डालते समय सावधानियाँ

- खाद व विशेषकर उर्वरक पौधों के मुख्य तने के पास नहीं डालने चाहिए।
- खाद व उर्वरक मिट्टी में मिलाते समय कस्सी या खुरपे से जड़ों को कोई नुकसान नहीं होना चाहिए।
- खाद एवं उर्वरक डालने के तुरन्त बाद गहरी सिंचाई करनी चाहिए।
- उर्वरक हमेशा सन्तुलित एवं निर्धारित मात्रा में मिट्टी व उत्तक विश्लेषण के आधार पर ही डालने चाहिए।
- पोषक तत्वों की कमी के लक्षण मार्गदर्शन मात्र हैं। इन्हें उत्तक विश्लेषण द्वारा निश्चित करना चाहिए।

निराई-गुड़ाई एवं खरपतवार नियन्त्रण

बागों में खरपतवार नियंत्रण

खरपतवारों के बीजों का लम्बे समय तक सुप्त अवस्था में मिट्टी में पड़े रहना, अन्य फसलों की तुलना में प्रति पौधा अत्यधिक बीज पैदा करना तथा बीजों का लम्बे समय उगने योग्य बने रहना इनके प्रसार को अति आसान बनाता है और खरपतवार नियंत्रण को उतना ही जटिल बनाता है। 2-4-डी नामक खरपतवारनाशक की खोज के साथ ही खरपतवार नियंत्रण को एक नई गति प्रदान हुई। बागों में खरपतवार नियंत्रण पर बहुत ही कम अनुसंधान कार्य हुआ है। अधिकतर बागों में परम्परागत पद्धति से ही खरपतवार नियंत्रण किया जाता है। खरपतवार नियंत्रण तीन मुख्य तरीकों से किया जा सकता है जो निम्नलिखित हैं।

क) भौतिक नियंत्रण

इस विधि में खरपतवारों को या तो काट दिया जाता है जिससे वो नष्ट हो जाएं या फिर निराई-गुड़ाई की जाती है जिससे खरपतवार नष्ट होने के साथ-साथ मिट्टी में वायु के प्रवेश तथा नमी को सुरक्षित रखने में भी सहायता करते हैं। निराई-गुड़ाई खरपतवारों के जमाव व बढ़वार को ध्यान में रखते हुए उचित समय पर की जानी चाहिए। खरपतवारों के बीजों को उगने से रोकने के लिए विभिन्न प्रकार की वस्तुएं मिट्टी की ऊपरी सतह को ढ़कने के लिए प्रयोग की जा सकती हैं जिन्हें मल्च (Mulch) कहते हैं जैसे सरकण्डा, (Saccharum) बाजरे, गेंहूँ, जौ, चावल, आदि की कड़बी, 300 गेज की काली पोलीथीन की चद्दर इत्यादि। इस प्रकार दाल वाली फसलें जैसे मूंग, लोबिया, राजमा आदि बो कर भी खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है। दाल वाली

फसलें वायुमंडल की नाईट्रोजन को भूमि में जड़ों के माध्यम से जमा करती हैं और मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बढ़ाती हैं।

ख) जैविक नियंत्रण

जैविक नियंत्रण में खरपतवारों के नियंत्रण के लिए अन्य जीवधारियों का प्रयोग किया जाता है। इस संदर्भ में खरपतवारनाशक कीड़े एक अति विशिष्ट उदाहरण हैं। खरपतवार नियंत्रण में विदेशी कीटों का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए यह अनिवार्य है कि वह कीट नई जलवायु में जीवित रह सके और वहां की किसी भी फसल के लिए खतरा न बने। बागवानी में इस प्रकार के नियंत्रण को अभी तक कोई विशेष सफलता नहीं मिली है।

ग) रासायनिक नियंत्रण

सन् 1940 में 2,4 डी के आगमन के साथ ही रासायनिक खरपतवार नियंत्रण की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित हुआ और इसे खरपतवार नियंत्रण के एक मुख्य तरीके के रूप में जाना गया। तब से आज तक अनेक प्रकार के खरपतवारनाशकों की खोज हो चुकी है।

खरपतवारों का चुनिन्दा होना एक सम्बन्धित गुण है जो कि बहुत सारे कारको के आपसी तालमेल पर निर्भर करता है जैसे खरपतवारनाशक के भौतिक एवं रासायनिक गुण और पौधों की अनुवांशिकी तथा वानस्पतिक हालत। खरपतवारनाशक चुनिन्दा तथा गैर चुनिन्दा दो प्रकार के होते हैं। इनमें से कुछ स्पर्श खरपतवारनाशक होते हैं जो पौधों के सम्पर्क में आते ही मार देते हैं जबकि दूसरे पौधों के पत्तों के रस में मिलकर एक स्थान से दूसरे परिवहन होने के बाद खरपतवारों को मारते हैं। रासायनिक खरपतवारनाशकों का प्रयोग निम्न प्रकार से किया जाता है।

बुआई/रोपाई से पहले नियंत्रण

बुआई अथवा रोपाई से पहले प्रयोग किये जाने वाले खरपतवारनाशक यदि चुनिन्दा हों तो उन्हें किसी भी समय लगाया जा सकता है। परन्तु यदि वे चुनिन्दा न हो तो उन्हें बुआई अथवा रोपाई से काफी समय पहले प्रयोग करना चाहिए।

उगने से पहले नियंत्रण

इन्हें बुआई के बाद तथा बीज उगने से पहले प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार के खरपतवारनाशक मिट्टी की ऊपरी सतह में मौजूद होने चाहिए तथा मिट्टी में प्रर्याप्त नमी होनी चाहिए। अत्यधिक नमी से खरपतवारनाशक मिट्टी की नीचे की सतह में जाकर व्यर्थ हो सकता है।

उगने के बाद नियंत्रण

इस प्रकार के खरपतवारनाशक फसल बोने/पौध रोपण के बाद प्रयोग किये जाते हैं। चुनिन्दा खरपतवारनाशक का प्रयोग पौधों से दूर-दूर करना चाहिए तथा खरपतवारनाशक छिड़काव के समय छिटक कर फलवृक्षों पर नहीं जाना चाहिए। खरपतवारनाशकों की मात्रा फसल, डालने के समय व तरीके तथा मिट्टी में उसके अवशेष प्रभाव आदि पर निर्भर करती है।

रासायनिक खरपतवारनाशक प्रयोग करते समय ध्यान रखने योग्य बातें :

1. एक खरपतवारनाशक का छिड़काव करने के बाद दूसरी फसल में अन्य खरपतवारनाशक का छिड़काव करने से पहले स्प्रेयर को अच्छी तरह पानी व डिटरजेंट से धो लेना चाहिए।
2. खरपतवारनाशक के डिब्बे पर लिखी हिदायतों का अनुसरण करें।
3. खरपतवारनाशकों का प्रयोग उचित मात्रा में करना चाहिए क्योंकि कम मात्रा पूरी असर नहीं करती और अत्याधिक मात्रा फसल को जला सकती है।
4. छोटे और उगते हुए खरपतवार पुराने खरपतवारों की तुलना में आसानी से मर जाते हैं।
5. रासायनिक खरपतवारों का प्रयोग करते समय मिट्टी मे प्रर्याप्त नमी होनी चाहिए तथा कम से कम 28-48 घंटे तक वर्षा नहीं होनी चाहिए व खिली धूप रहनी चाहिए।
6. खरपतवारनाशक के छिड़काव के बाद यदि कीट व बिमारियों के नियंत्रण के लिए छिड़काव करने के लिए उसी स्प्रेयर का प्रयोग करना हो तो स्प्रेयर को डिटरजेंट से धो लेना चाहिए।

बागों में अन्त:फसलीकरण

अधिकतर फलदार पौधे आरम्भ के 2-6 वर्ष तक केवल शाकीय बढ़वार करते हैं और उसके बाद ही फल देना शुरू करते हैं। इस दौरान पौधों के बीच की खाली जगह में अन्य लघुकालीन फसलें उगाकर बागवान अतिरिक्त आय ले सकते

हैं। इसे अन्तःफसलीकरण कहते हैं। अन्तःफसलीकरण के लिए केवल वही फसलें उपयुक्त हैं जो बौनी रहती हैं, कम फैलती हैं और फलदार पौधों के साथ हस्तक्षेप नहीं करती। गेंहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का, गन्ना इत्यादि फसलों को पानी व पोषक तत्वों की आवश्यकता अधिक होने तथा लम्बा बढ़ने के कारण इस प्रकार की फसलें अन्तःफसलीकरण के लिये उपयुक्त नहीं हैं। फलदार पौधों के बीच अन्तःफसलीकरण के लिए सब्जियाँ जैसे धनिया, टमाटर, मिर्च, बैंगन, मूली, प्याज, पालक, मटर इत्यादि तथा दलहनी फसलें जैसे मूंग, राजमा, सोयाबीन, लोबिया आदि अति उपयुक्त हैं। इनकी जड़ें अधिक गहरी नहीं जाती व बढ़वार भी कम होती है। इन फसलों को इनकी आवश्यकतानुसार अतिरिक्त खाद व सिंचाई देनी चाहिए वरना ये फलदार पौधों की बढ़वार पर विपरीत असर डालती है। फलदार पौधों के बीच अन्य फल भी अन्तःफसलीकरण के लिए प्रयोग किये जाते हैं जिन्हें भरक (Filler) पौधें कहा जाता है। इस प्रकार के पौधों में पपीता, फालसा (बौनी किस्म), अनानास, स्ट्रोबेरी, करौंदा इत्यादि मुख्य हैं जो 10 माह से 2

वर्ष के मध्य ही फल देना आरम्भ कर देते हैं। अत्याधिक बड़े फलदार वृक्षों जैसे आड़ू, आलूबुखारा, अनार, अमरूद आदि लगाये जा सकते हैं। बीच में लगाये जाने वाले फलों की सिंचाई व उर्वरक डालने का समय मुख्य फलवृक्ष वाला ही होना चाहिए तथा उनकों अतिरिक्त खाद व उर्वरक देना चाहिए। दक्षिण व पूर्वी भारत के कुछ राज्यों में केला भी अन्तःफसलीकरण में प्रयोग किया जाता जाता है।

फल-फूल गिरना

आमतौर पर फल-फूल गिरने के मुख्य कारण निम्नलिखित होते हैं।

क) किस्में

फलों की कुछ किस्मों में अन्य किस्मों की तुलना में फूल-फल गिरने की समस्या अधिक पाई जाती है जैसे अंगूर की ब्यूटी सीडलैस, पूसा सीडलैस तथा गोल्ड किस्में। इन किस्मों में अर्द्ध खिली कली, फूल व दानों का झड़ना आम बात हैं इसी प्रकार अन्य फलों की किस्मों में भी इसी प्रकार का अन्तर पाया जाता है।

ख) भ्रूणपात

यह समस्या कई फलों में देखी गई है। परागण व फलयुक्त होने के बाद भ्रूणपात हो जाता है और भ्रूणपात के बाद के फल गिरने लगते हैं। यह समस्या आमतौर पर अपूर्ण परागण तथा अपूर्ण फलयुक्त (Fertilization) होने के कारण आती है। भ्रूणपात सेब, आलूबुखारा, आम आदि में आमतौर पर पाया जाता है।

ग) जलवायु

फल गिरने की समस्या का जलवायु के साथ सीधा तथा अति महत्वपूर्ण सम्बंध है। जलवायु में तापमान, आर्द्रता तथा हवा की गति इस संदर्भ में अहम् भूमिका निभाती है। अत्यधिक तापमान होने की अवस्था में (विशेषकर दिन के समय) छोटे पत्तों, फूलों व छोटे फलों से वाष्पीकरण की गति तेज हो जाती है और काफी मात्रा में फूलों का पानी वाष्प बनकर उड़ जाता है। इस प्रकार फूल-फल झड़ जाते हैं। इसी स्थिति में फल फटने की समस्या भी बढ़ जाती है तथा फटे हुए फल बाद में गिर जाते हैं। हवा की तेज गति भी फल गिरने की समस्या को बढ़ावा देती है।

घ) सिंचाई/नमी

अत्यधिक तापमान (विशेषकर गीष्म काल में) होने पर वाष्पोत्सर्जन दर भी बढ़ जाती है और मिट्टी में नमी की कमी हो जाती है। इस प्रकार फूल-फलों को आवश्यकतानुसार पानी नहीं मिलता और फल झड़ने लगते हैं। समय-समय पर आवश्यकतानुसार सिंचाई देने से फल गिरने की समस्या काफी हद तक कम हो जाती है। फूल आने के समय सिंचाई नहीं करनी चाहिए बल्कि इससे कुछ पहले सिंचाई करनी चाहिए। फूल आने के समय मिट्टी में नमी की कमी भी नहीं होनी चाहिए।

ड) पोषक तत्वों की कमी

पौधों के लिए सन्तुलित मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध होना अति आवश्यक है। विशेषकर फलों की बढ़वार के समय पोषक तत्वों की पौधों को अधिक आवश्यकता होती है तथा पोषक तत्वों के लिए फलों की स्पर्धा होती है। इसलिए जिन फलों को पोषक तत्व पूरी मात्रा में नहीं मिलते उनकी बढ़वार रूक जाती है और वे गिर जाते हैं। फल लगने के बाद पोषक तत्वों की कमी के लक्षण नजर आने पर शीघ्र पूर्ति के लिए छिड़काव किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त सन्तुलित पोषण के लिए निर्धारित समय पर उपयुक्त मात्रा में खाद व उर्वरक देने चाहिए।

च) बीज व फल गिरने का संबन्ध

अनेक फलों में यह पाया गया है कि फलों को प्रचुर मात्रा में न्यासर्ग (Horomone) विशेष तौर पर ऑक्सीजन उपलब्ध कराते हैं जो कि फलों की बढ़वार के लिए अति आवश्यक होते हैं। अत: छोटे बीज वाले तथा बीज रहित फलों की बढ़वार रूक जाती है तथा वे गिर जाते हैं।

छ) अत्यधिक फलन

पौधें में अत्यधिक फल लगने की अवस्था में फल झड़ने की समस्या अधिक होती है। अत: पौधों पर अत्यधिक फलन की अवस्था में फल विरलन करना चाहिए।

ज) कीट एवं बिमारियाँ

अनेक प्रकार के कीट एवं बिमारियाँ पत्तें, फूल एवं फलों को नुकसान पहुँचाते है तथा पौधों के ओजस्व को कम करते हैं। फल-मक्खी तथा फलछेदक जैसे कीट तथा सफेद चूर्णी व भूरे धब्बे वाले रोग आदि फलों पर आक्रमण करते हैं। इस प्रकार के फल या तो गिर जाते हैं या फिर उपयोगी नहीं रहते।

विभिन्न फलों में फल-फूल गिरने की समस्या की रोकथाम के उपाय

नींबूवर्गीय फल

10 पी.पी.एम. 2,4-डी + 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट + 20 पी.पी.एम. आरियोफीन या बावीस्टीन का पहला छिड़काव जून-जुलाई के दूसरे सप्ताह में तथा दूसरा सितम्बर के दूसरे सप्ताह में करें। इसके लिए प्रति एकड़ 6 ग्राम 2,4-डी, 3 किलोग्राम जिंक सल्फेट, 1.5 किलोग्राम चूना, 12 ग्राम आरियोफंजिन या बावीस्टीन 550 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

अंगूर

फूल खिलने से पूर्व मुख्य तने से 0.5 सै.मी. चौड़ाई का छल्ला उतारें, ज्यादा फल न लें। नाइट्रोजन का इस्तेमाल कम करें। फूल आने पर सिंचाई न लगाएं।

आम

अप्रैल-मई में 2 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें। जिन किस्मों के फल तुड़ाई से कुछ पहले गिरते हैं उन पर 20 पी.पी.एम. (20 मिलीग्राम 2,4-डी प्रति लीटर पानी) 2,4-डी का छिड़काव अप्रैल के अन्त या मई के आरम्भ में करें।

बेर

2 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें।

आंवला

0.1 प्रतिशत बोरेक्स तथा 0.4 प्रतिशत जिंक सल्फेट का छिड़काव करें।

जामुन

जिब्रैलिक अम्ल 50-100 पी.पी.एम. एक-दो बार फूल आने व उसके 15 दिन बाद छिड़काव करें।

लीची

एन.ए.ए. (प्लानोफिक्स) 10 पी.पी.एम. + 2,4-डी 15 पी.पी.एम. + 10 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें।

फल फटना

फल फटना भी अनेक फलों में एक गंभीर समस्या है। फटे हुए फलों को मण्डी में बहुत कम भाव मिलता है और

बागवानी को काफी आर्थिक नुकसान होता है। फल फटने की समस्या अनार, लीची, नींबू, बेल, केला आदि में पायी जाती है। फल फटने के निम्नलिखित कारण हो सकते हैं :-

1. पौधों में बोरोन की कमी होना।
2. अत्याधिक तापमान तथा सापेक्ष आर्द्रता का कम होना।
3. मिट्टी में जैविक पदार्थो (Organic Matter) की कमी होना।
4. लम्बे सूखे अन्तराल के बाद सिंचाई विशेषकर गहरी सिंचाई देना या वर्षा होना।

फल फटने की रोकथाम

1. बोरेक्स 0.1 से 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करें।
2. पौधों को भरपूर मात्रा में जैविक (देशी खाद) खाद दें।
3. लम्बे अन्तराल पर गहरी सिंचाई की बजाय जल्दी-जल्दी हल्की सिंचाई करनी चाहिए।
4. यदि सम्भव हो तो रोधक किस्में ही लगायें।
5. 2,4,5-टी या एन.ए.ए. 35-5. पी.पी.एम. का छिड़काव भी समस्या को काफी हद तक नियंत्रित करता है जैसे लीची में।

अगेता पकाना

फलों का पूरा आकार होने व रंग हरे से हल्का हरा होने के समय इथरैल नामक दवाई का छिड़काव करने से अनेक फलों का पकाव 7-10 दिन पहले तक हो जाता हैं। विभिन्न फलों में इस दवा की 50-1000 पी.पी.एम. सान्द्रता का छिड़काव किया जाता है।

भण्डारण अवधि बढ़ाने हेतु छिड़काव

तोड़ाई पूर्व पौधों पर इण्डोफिल एम-45, बावीस्टीन आदि फफूंदीनाशक की 0.1-0.3 प्रतिशत सान्द्रता का छिड़काव करने से अनेक फलों को तोड़ाई उपरान्त 8-10 दिन तक गलने-सड़ने से बचाया जा सकता है।

तोड़ाई-उपरान्त फल रखरखाव

भारत में उचित रखरखाव व सुविधाएं उपलब्ध न होने के कारण प्रति वर्ष कुल उत्पादन का 30-40 प्रतिशत नष्ट हो जाता है जिसे "हिडन हारवैस्ट" या तोड़ाई उपरान्त नुकसान की संज्ञा दी जाती है। यदि उचित प्रबन्धन व विभिन्न तकनीकों की सहायता से हम इसे बचा लें तो हमें इतने ही अतिरिक्त उत्पादन के लिए क्षेत्रफल बढ़ाने व खर्च वहन करने की आवश्यकता नही पड़ेगी। इतनी मात्रा में फल व सब्जियों के नष्ट होने के लिए तोड़ाई पूर्व व उपरान्त, दोनों प्रकार के कारक उत्तरदायी हैं जो नीचे दिये गये हैं।

1. परिपक्वता या पकने की अवस्था।
2. फल-सम्भलाव या रख-रखाव के दौरान यान्त्रिक क्षति।
3. पौधों पर छिड़के गये विभिन्न रसायनों के कारण क्षति।
4. अधिक तापक्रम।
5. बहुत कम तापक्रम (हिमीकरण)
6. सापेक्ष आर्द्रता।
7. भण्डारण में आक्सीजन की कमी या कार्बन डाइआक्साइड की अधिकता।
8. डिब्बाबन्दी या पैकेजिंग के कारण।
9. फलों के प्राकृतिक गुण व संरचना के कारण।
10. गर्म पानी से उपचार के कारण।
11. विभिन्न बिमारियों के कारण।

फलों की तोड़ाई उपरान्त भण्डारण क्षमता बढ़ाने के उपाय

1. फलों को उचित परिपक्वता पर तोड़े। दूर-दराज या निर्यात के लिए भेजे जाने वाले फलों को हरी अथवा रंग बदलने की अवस्था पर, जबकि स्थानीय मण्डी के लिए सख्त परन्तु पूर्ण परिपक्व अवस्था पर तोड़ना चाहिए। इस अवस्था को जाँचने के अनेक तरीके है।
2. फल को तोड़ाई से लेकर विपणन तक हर अवस्था पर यान्त्रिक क्षति से बचाना चाहिए।
3. किसी भी कीट, बीमारी या अन्य व्यक्ति के नियन्त्रण हेतु दवाईयों का प्रयोग समुचित मात्रा में करना चाहिए।

4. अधिक तापमान की अवस्था, विशेषकर गर्मी में फलों को तोड़ाई उपरान्त तुरन्त ठण्डे स्थान पर स्थानान्तरित करना चाहिए।
5. भण्डारण, विशेषकर शीत भण्डारण में फलों को हिमीकरण से बचाने के विभिन्न फलों के लिए निर्धारित तापमान बनाए रखना चाहिए। विभिन्न फलों के शीत भण्डारण हेतु निम्न तापमान रखना चाहिए।
6. फलों के भण्डारण के दौरान सापेक्ष आर्द्रता 85-90 प्रतिशत रहनी चाहिए।
7. फलों के भण्डारण के दौरान ऑक्सीजन व कार्बन डॉइआक्साइड का उचित स्तर बनाए रखना चाहिए।
8. फलों की संरचना, परिवहन की विधि, पैकिंग की भार सहन क्षमता व मजबूती के अनुसार पैकिंग का प्रयोग करना चाहिए।
9. फलों के परिवहन व भण्डारण के दौरान कीट व बिमारियों से बचाव के लिए यदि गर्म पानी से उपचार करना हो तो वह सावधानी से उचित तापमान व अवधि के लिए ही करें।
10. कीट व बिमारियों से बचाने के लिए पौधों पर व पैकिंग पूर्व उचित मात्रा में सिफारिश की गई दवाईयों से उपचारित करना चाहिए।

फलों की तोड़ाई

फलों की तोड़ाई के लिए शाखाओं को पीटना नहीं चाहिए। या तो हाथ से पके फलों को तोड़े या फिर शाखाओं को हल्का हिला दें ताकि तैयार फल नीचे गिर जाए। शाखाओं को हिलाने से पहले पूरे पेड़ के नीचे बोरी, पल्ली या पॉलिथीन की चद्दर बिछाने से फलों को कटने-फटने से बचाया जा सकता है। कटे-फटे फल तत्काल रोगग्रस्त हो जाते हैं।

छंटनी एवं श्रेणीकरण

तोड़ाई उपरान्त फलों को तत्काल छाया में ठण्डे स्थान पर रखकर छंटनी करनी चाहिए। कटे-फटे अथवा खरोंच लगे फलों को स्वस्थ फलों से अलग कर देना चाहिए। तत्पश्चात स्वस्थ फलों को गुणवत्ता (आकार, रंग, स्वाद, किस्म आदि) के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में बांट देना चाहिए। ऐसा करने से बागवानों को काफी अधिक मूल्य मिलता है। 20 ग्राम के फलों की तुलना में उसी किस्म के 35 ग्राम वाले फल दो गुणा मूल्य पर बिकते है।

डिब्बाबन्दी या पैकिंग

हरियाणा प्रान्त में या कहें कि आमतौर पर पूरे देश में बेरों को कट्टे-बोरी में भरकर या गठड़ी बांधकर मण्डी में बेचने का प्रचलन है। परन्तु विभिन्न प्रकार की पैकिंग जैसे बाँस की टोकरी, लकड़ी की पेटी, पोलीथीन बैग, कपड़े की थैली, बोरी, गत्ते के डिब्बो (कोरूगेटिड फाईबर बाक्स) में फूंस, कागज की कतरन अथवा अखबार बिछाकर या बिना बिछाए पैकिंग कर परिवहन व तत्पश्चात भण्डारण पर किए गए शोध कार्य से पता लगा कि गत्ते के डिब्बे पैकिंग के लिए उत्तम है। स्थानीय मण्डियों के लिए पूरे पके फल तोड़ें जब कि दूर-दराज की मण्डियों के लिए पूरा आकार होने पर हल्के हरे-पीले रंग के फल तोड़ें।

पौध संरक्षण

फलदार पौधों के मुख्य कीट-बिमारियां, उनके प्रकोप के लक्षण व नियन्त्रण निम्नलिखित हैं:-

क) कीट

1. **कीट का नाम : फल मक्खी**
2. **हानि के लक्षण :**

यह घरेलू मक्खी जैसी ही होती है परन्तु इसका रंग पीला-भूरा होता है और इसके पंखो पर सलेटी भूरे तथा वक्ष पर काले धब्बे होते हैं। मादा मक्खी फलों के छिलके के नीचे अण्डे देती है। प्रभावित फल टेढ़े-मेढ़े होकर काना हो जाते हैं और मण्डीकरण योग्य नहीं रहते। साधारण फलों की तुलना में ये जल्दी पककर गिर जाते हैं। पूर्ण विकसित सूण्डियां स्वयं बनाये छेद में से जमीन पर गिरकर प्यूपा बनाती हैं। सुण्डी की अवस्था 7-24 दिन है। नवम्बर से अप्रैल के मध्य इसकी 3-4 पीढ़ियां पनपती हैं और अगेते व अधिक मीठे फलों पर इसका प्रकोप अधिक होता है। प्रौढ़ दीर्घायु होते हैं तथा इसकी पीढ़ी सितम्बर में दिए अण्डों की 15-40 दिन व जनवरी में दिए गए अण्डों की 35-80 दिन होती है।

3. नियन्त्रण एवं सावधानियां :

1. नवम्बर मास में जब 75-80 प्रतिशत फल बंध चुका हो और बेर मटर के दाने के समान हो जाएं तो पेड़ों पर 600 मि.ली. आक्सीडेमेटान मिथाल (मैटासिस्टाक्स) 25 ई. सी. या 500 मि.ली. डायमेथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें व आवश्यकता पड़ने पर 15 दिन बाद दोहराएं। जनवरी मास में (यदि प्रकोप हो) 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. व 5 किलोग्राम गुड़ को 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़कें।
2. मक्खी ग्रस्त फलों को प्रतिदिन इकट्ठा करें व जमीन में 2 फुट गहरा दबा दें या भेड़-बकरियों को खिला दें।
3. मई-जून व दिसम्बर-जनवरी में बाग में गहरी खुदाई या जुताई करें। मैलाथियान के छिड़काव उपरान्त फल कम से कम 2 दिन बाद तोड़े व आधा मिनट पानी में डुबोकर रखे ताकि दवा का अवशेषी प्रभाव न रहे।

1. कीट का नाम : दीमक

2. हानि के लक्षण :

यह एक ऐसा कीट है जिसका प्रकोप अनेक फसलों, फलदार, छांयादार व अनेक अन्य वृक्षों पर होता है। नये रोपित व छोटे पौधों पर इसका प्रकोप अधिक होता है। रेतीले, अर्द्ध-शुष्क व शुष्क जलवायु इसकी वृद्धि को बढ़ावा देती है। यह कीट रोशनी पसंद नहीं करता व मिट्टी के नीचे रहकर जड़ों को खा कर तने को खोखला बनाते हुए उपर की ओर बढ़ता है अथवा पेड़ों के तनों के उपर मिट्टी की सुरंग बनाकर इसके अन्दर रहकर छाल खाते हैं। इसके कमेरों द्वारा जड़, छाल व तनों के क्षतिग्रस्त होने के फलस्वरूप पेड़ सूखकर मर जाते हैं। लोहे-पत्थर के अतिरिक्त यह किसी भी वस्तु को नहीं छोड़ता। दीमक ग्रस्त पौधें तेज हवा अथवा आंधी में गिर जाते है। इस कीट का प्रकोप वर्ष भर रहता है परन्तु सर्दी व वर्षा ऋतु में इसका प्रकोप कम रहता है।

3. नियन्त्रण :

यान्त्रिक नियन्त्रण

1. बाग को साफ-सुथरा रखें। घास-फूँस, ठूंठ, गली-सूखी लकड़ी इत्यादि बाग में न रहने दें।
2. थाँवलों मे गहरी खोदी करें व निरन्तर नमी बनाए रखें।
3. गोबर व किसी भी प्रकार की कच्ची खाद दीमक का उत्तम भोजन है। अत: इनका प्रयोग न करें।

रासायनिक नियन्त्रण

पौधारोपण से पहले गड्ढे में 30 मि.ली. क्लोरपायरिफास 20 ई.सी. को 10 लीटर पानी में घोलकर प्रति गड्ढा डालें। दवा डालने से पहले गड्ढों में 2-3 बाल्टी पानी डाल दें। ऐसे उपाय करें जिससे इसका प्रकोप ही न हों। पौधारोपण के बाद 2-3 साल तक 30-45 दिन में एक बार आवश्यकतानुसार 10-20 मि.ली. क्लोरपायरीफास या एण्डोसल्फान 35 ई.सी. प्रति पौधा सिंचाई के साथ डालें।

1. कीट का नाम : बालों वाली सुण्डी

2. हानि के लक्षण :

इसका प्रकोप छुटपुट होता है। सुण्डी गहरे-भूरे रंग की होती है जिसके शरीर पर लम्बे-लम्बे बाल होते हैं। अण्डे से निकलते ही बहुत सारी सूण्डियां इकट्ठी होकर पत्ते की निचली सतह पर खाती हैं और फलों को छलनी कर देती हैं। बड़ी होकर ये सब पत्तों पर फैल जाती हैं। अत्यधिक खाने के कारण पौधे पत्ते रहित हो जाते हैं। यह सुण्डी फलों को भी नुकसान पहँचाती है।

3. नियन्त्रण :

- छोटी सूण्डियों को हाथ से नष्ट करें।

- निम्नलिखित में से किसी भी एक कीटनाशक का प्रयोग करें।

  500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 डबल्यू एस.सी. + 500 लीटर पानी **या** 1000 मि.ली. एण्डोसल्फान 35 ई.सी. + 500 लीटर पानी **या** 1000 ग्राम कार्बेरिल (सेविन) 50 डब्ल्यू. पी. + 500 लीटर पानी

1. कीट का नाम : पत्ते खाने वाली भूण्डियां

2. हानि के लक्षण :

इस भुण्डी की प्रजायिां बेर के अतिरिक्त अंगूर, अमरूद आदि अनेक फल वृक्षों को हानि पहुँचाती हैं क्योंकि ये बहुभोजी हैं। इनका प्रकोप अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में अधिक होता है। प्रौढ़ शक्तिशाली और चमकीले होते हैं ओर ये वृक्षों के पत्तों को खाते हैं। ये मानसून या इनसे पहले की वर्षा के बाद अत्याधिक सक्रिय रहते है। ये सांयकाल के समय जमीन से निकलकर आते हैं तथा रातभर खाने के बाद सुबह जल्दी ही वापिस जमीन में छुप जाते हैं। पत्तों पर गोल छिद्र कर देते हैं और अत्याधिक प्रकोप की अवस्था में वृक्ष पत्ते रहित हो जाते हैं तथा फलित नहीं होते। प्रौढ़ की आयु 30 दिन होती है और वर्ष भर में इसकी केवल एक ही पीढ़ी उत्पन्न होती है।

3. नियन्त्रण :

- मानसून की प्रथम वर्षा के एक दिन बाद प्रौढ़ निकलने के उपरान्त निम्नलिखित में से किसी भी एक कीटनाशक का छिड़काव करें।
- 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास 36 डबल्यू एस.सी. + 500 लीटर पानी प्रति एकड़ **या** 1000 मि.ली. क्विनलफास (इकालक्स) + 500 लीटर पानी प्रति एकड़ **या** 1500 ग्राम सेविन + 500 लीटर पानी प्रति एकड़।
- यदि छिड़काव के बाद वर्षा हो जाएं तो पुन: छिड़काव करें।
- बाग के आस-पास के सभी वृक्षों पर भी छिड़काव करें।

1. कीट का नाम : छाल खाने वाली सूण्डियां

2. हानि के लक्षण :

ये बेर के अतिरिक्त फलदार, छायादार व अन्य वृक्षों को हानि पहुँचाती हैं। यह कीट प्राय: नजर नही आता परन्तु इसका मल व लकड़ी के बुरादे जैसा जाला दो शाखाओं के जोड़ के आसपास पाया जाता है। दिन में यह तने के जोड़ के आसपास पाया जाता है। दिन में यह तने के अन्दर घुसकर सुरंग बनाती है और रात को जाले के नीचे रहकर छाल खाती है। इस प्रकार यह पौधों की खुराक नली को नष्ट कर देती है व जड़ से पोषक तत्व पौधे के अन्य भाग को तथा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया से बना भोजन जड़ों को नहीं पहुँच पाता जिसके फलस्वरूप पौधा सूख जाता है। तेज हवा चलने पर प्रकोपित शाखाएं टूटकर गिर जाती हैं। पुराने व जिन बागों में प्रबंधन ठीक न हो, उनमें इस कीट का प्रकोप अधिक मिलता है। वर्ष भर में इसकी एक ही पीढ़ी होती है जो जून-जुलाई में उत्पन्न होती है।

3. नियन्त्रण :

- समय-समय पर नजर आते ही वृक्ष से सभी जाले हटाएं।
- सितम्बर-अक्टूबर में 10 मि.ली. मिथाइल पैराथियान (मैटासिड) 50 ई.सी. + 10 लीटर पानी के घोल को सुराखों के आसपास लगाएं।
- फरवरी-मार्च मे निम्नलिखित मे से किसी भी एक कीटनाशक का घोल एक सीरिंज की मदद से 5 मिली लीटर प्रति छिद्र अथवा छिद्र भरने तक डालें व तत्काल रूई अथवा गीली मिट्टी से सुराखों को अच्छी तरह बन्द कर दें।

  40 ग्राम कार्बेरिल (सेविन) 50 प्रतिशत घु.पा. + 10 लीटर पानी **या** 10 मि.ली. फैनिट्रोथियान 50 ई.सी. + 10 लीटर पानी **या** 2 मि.ली. डाईक्लोरवास 76 ई.सी. + 10 लीटर पानी **या** 5 मि.ली. मिथाल पैराथियान 50 ई.सी. + 10 लीटर पानी **या** 3 मि.ली. एण्डोसल्फान 35 ई.सी. + 10 लीटर पानी **या** 1000 मि.ली. मिट्टी तेल + 100 ग्राम साबुन + 9 लीटर पानी।
- बाग के आसपास के सभी वृक्षों पर भी उपचार करें।
- बाग को साफ-सुथरा रखें व निर्धारित दूरी पर ही पौधारोपण करें।

1. कीट का नाम : चूरड़ा/थ्रिप

2. हानि के लक्षण :

यह मुख्य रूप से अंगूर का कीट है। इसके अलावा नींबूवर्गीय फल जामुन, आम व अमरूद को भी नुकसान

पहुँचाता है। इसके शिशु (Nymph) छोटे, पीले-भूरे व युवा (dult) काले-भूरे रंग के पतले व लम्बे होते हैं जो पत्तों की निचली सतह से रस चूसकर सफेद भूरे रंग के धब्बे बना देते हैं। शिशु जो बहुत हानिकारक होते हैं, 9-20 दिन में पूरी तरह से विकसित हो जाते हैं। जब प्रकोप बहुत ज्यादा होता है तो पत्ते मुड़ जाते है व पीले होकर गिर जाते हैं। अविकसित फल पर प्रकोप हो तो धब्बों की वजह से फल सख्त व भद्दे हो जाते हैं जिनसे उनकी गुणवत्ता पर भी प्रभाव पड़ता है। इसका ज्यादा नुकसान सूखे मौसम में अप्रैल से जून व अगस्त से नवम्बर में होता है। यह प्यूपे के रूप में दिसम्बर से मार्च तक जमीन में शांत व निष्क्रिय रहता है तथा मार्च से नवम्बर तक इसकी 5-8 पीढ़ियाँ होती हैं।

3. नियन्त्रण :

- 750 मि.ली. एण्डोसल्फान (थायोडान/एण्डोसिल) 35 ई.सी. या 150 मि.ली. फेनवलरेट (फेनवेल) 20 ई.सी. या 500 मि.ली. मैलाथियान (सायथियान) 50 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

नोट : जिन किस्मों के पत्ते रोयेंदार व निचली सतह मोटी हो उन पर इस कीट का ज्यादा नुकसान नहीं होता है।

1. कीट का नाम : नींबू का सिल्ला

2. हानि के लक्षण :

सिल्ला नींबू जाति के सभी फल वृक्षों का एक मुख्य कीट है जिसके शिशु गोल, चपटे व नारंगी-पीले तथा प्रौढ़ भूरे रंग के होते हैं, जो पत्तों व नई टहनियों से रस चूसते हैं। रस चूसने से पत्ते व टहनियां पीली हो जाती हैं व आखिरकार सूख जाती हैं। इसके शिशु ज्यादा नुकसानदेय होते हैं। इस कीट की 8-10 पीढ़ियां होती हैं व पूरा वर्ष सक्रिय रहता है। इसका ज्यादा नुकसान मार्च-अप्रैल व वर्षा ऋतु के बाद होता है। माल्टा व मीठे नींबू पर इसका ज्यादा नुकसान होता है।

3. नियन्त्रण :

- 625 मि.ली. डाइमैथोएट (रोगोर 30 ई.सी.) 25 ई.सी. या 5 मि.ली. मोनोक्रोटोफास (नूवाक्रान/मोनोसिल) 26 डब्ल्यू. एस.सी. या 130 मि.ली. फास्फोमिडान (डाइमेक्रान) 85 डब्ल्यू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में प्रति एकड़ छिड़कें।

नोट : नींबू जाति के सभी वृक्षों व बाड़ पर भी छिड़काव करें।

1. कीट का नाम : नींबू का लीफ माइनर

2. हानि के लक्षण :

यह कीट नींबू के पत्ते को नुकसान पहुँचाता है। बिना पैर के हल्के-पीले रंग की सूण्डियाँ, मुलायम पत्तियों के दोनों तरफ चमकीली व टेढ़ी-मेढ़ी सुरंगे बनाती हैं। प्रकोपित पत्तियों पर फंफूदी जैसी बीमारी हो जाती है जिससे पत्तियां व टहनियां सूख जाती हैं। पूरे साल में इस कीट की लगभग 12 पीढ़ियाँ होती हैं परन्तु ज्यादा नुकसान बसंत व मई से अक्तूबर के महीनें में होता है। इसका ज्यादा नुकसान मुलायम व रसदार पत्तियों पर होता है। नर्सरी में इसके प्रकोप से पूरा पौधा ही नष्ट हो जाता है।

3. नियन्त्रण :

- जैसा कि नींबू के सिल्ला में दिया गया है।

1. कीट का नाम : नींबू की सफेद व काली मक्खी

2. हानि के लक्षण :

सफेद मक्खी के शिशु चपटे, हल्के रंग के व शरीर पर

बाल होते हैं। प्रौढ़ के शरीर व पंखों पर सफेद रंग का पाऊडर होता है। काली मक्खी के शिशु चपटे, कांटेंदार, अंडाकार व गहरे भूरे या काले रंग के होते हैं, जबकि युवा हल्के नीले रंग के होते हैं। यह मुलायम पत्तियों से रस चूसते हैं जिससे पत्तियां पीली पड़ जाती हैं व आखिरकार सूखकर गिर जाती हैं। शिशु 25 से 70 दिनों तक पत्तियों की निचली सतह पर चिपक कर बड़े होते हैं। यह मक्खी मार्च से अप्रैल व अगस्त से सितम्बर में ज्यादा नुकसान करती हैं जबकि पूरी गर्मी (मार्च से सितम्बर) सक्रिय रहती है। इसकी साल में दो पीढ़ियाँ होती हैं। यह शिशु की अवस्था में शांत व निष्क्रिय रहता है व इसका प्रौढ़ ज्यादा दिन तक जीवित नहीं रहता। सफेद मक्खी नींबू के अलावा जामुन में भी नुकसान पहुँचाती है।

3. नियन्त्रण :

- 500 मि.ली. मोनोक्रोटोफास (नुवाक्रोन/मोनोसिल) 36 डब्ल्यू.एस.सी. या 750 मि.ली. एण्डोसल्फान (थायोडान/हिल्डान) 35 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

  नोट : बाग में पौधे जरूरत से ज्यादा नहीं लगाने चाहिएं। पानी का निकास सही होना चाहिए।

1. कीट का नाम : मिलीबग

2. हानि के लक्षण :

यह आम का एक बहुत ही विनाशकारी कीट है। इसके अलावा यह कीट बेर, अमरूद, नींबू, अनार, अंजीर आदि फलदार वृक्षों को भी नुकसान पहुँचाता है। दिसम्बर-जनवरी में जमीन के अन्दर अण्डे से निकलकर छोटे-छोटे भूरे शिशु वृक्षों की पत्तियों पर जमा हो जाते हैं। फरवरी महीने में नई पतली डालियों पर इकट्ठें हो जाते हैं। शिशु और मादा प्रौढ़ चपटे, मोटे व अण्डाकार होते हैं व इनके शरीर पर सफेद मार जैसा चूर्ण जमा होता है। ये दोनों जनवरी से अप्रैल तक नई डालियों के अलावा बौर वाली टहनियों से रस चूसते हैं जिससे टहनियां मुरझा जाती हैं। फलस्वरूप वृक्षों पर फल ही नहीं लगते। बग एक प्रकार का मीठा रस भी छोड़ता है जिससे पौधे पर काले रंग की फफ्रूंदी जमा हो जाती है, जो प्रकाश संश्लेषण में बाधा डालती है। यह कीट दिसम्बर से मई तक सक्रिय रहता है तथा जून से नवम्बर तक अण्डों के रूप में जमीन में रहता है। इसकी एक पीढ़ी होती है। जिन बागों में कई प्रकार के फलवृक्षों की वजह से भूमि की जुताई नहीं हो पाती, उनमें इस कीट का अधिक प्रकोप होता है।

3. नियन्त्रण :

- मध्य दिसम्बर में इस कीड़े के शिशुओं को पेड़ों पर चढ़ने से रोकने के लिए जमीन से 50 से 100 सैं.मी. ऊँचाई पर मुख्य तने पर लगभग एक फुट चौड़ी, चिकनी अल्काथेन (300-400 गेज पोलीथीन) की पट्टी बांधे। पेड़ की ऊपरी पुरानी 5-8 सै.मी. चौड़ी छाल अल्काथेन चादर लगाने से पहले कुल्हाड़ी से काटकर उतार लेनी चाहिए और इस समतल स्थान के ऊपर 5 सैं.मी. चौड़ी तारकोल की तह लगाकर तुरन्त चादर के निचले भाग की किनारियों से अच्छी तरह दबा दें ताकि चादर और तारकोल के मध्य कोई खाली स्थान न रहें। इसी प्रकार चादर के उपरी हिस्से को भी 3-4 जगह से चिपका दें।
- बैण्ड (फिसलने वाली पट्टी) के नीचे जमा कीटों को 100 मि.ली. मिथाईल पैराथियान (मेटासिड) 50 ई.सी. या 30 मि.ली. क्विनलफॉस (इकालक्स) 25 ई.सी. यस डायजनान (वासुडीन) 20 ई.सी. को 50 लीटर पानी में घोलकर नष्ट किया जा सकता है। एक वृक्ष के छिड़काव के लिए लगभग एक लीटर घोल की जरूरत पड़ती है। 500 मि.ली. मिथाईल पैराथियान मैटासिड 50 ई.सी. या 1.5 लीटर क्विनलफॉस (ईकालक्स) 25 ई.सी. या 1.25 लीटर डायजिनान (वासुडिन) 20 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कने से पत्तों व टहनियों पर जमा कीटों को मारा जा सकता है।
- अप्रैल व मई में वृक्षों से नीचे उतरती हुई, जो फंस गई हो या नीचे गिरी हुई मादाओं को सूखी पत्तियों के साथ इकट्ठा करके जला दें।
- जून-जुलाई में वृक्षों के नीचे की जमीन को उलट- पलट करें ताकि सूर्य की गर्मी व परजीवी शत्रुओं से कीट के अण्डे नष्ट हो जायें। बाग को साफ सुथरा रखें, कचरे आदि को जला दें।

  नोट : बाग में सभी वृक्षों पर बैड लगायें। वृक्षों के पत्ते व टहनियाँ भूमि या अन्य वनस्पति को न छुयें ताकि जमीन से बग वृक्षों पर न चढ़ सकें।

1. कीट का नाम : आम का तेला या फुदका

2. हानि के लक्षण :

तेला आम का एक मुख्य कीट है। इसके पीले भूरे शिशु व भूरे हरे पच्चड़ की शक्ल के प्रौढ़, नई पत्तियों, कलियों, फूल

की डंडियों व बौर से रस चूसते हैं जिससे ये मुरझाकर सूख जाती हैं। ज्यादा प्रकोप से पूरे पेड़ खत्म हो जाते हैं। शिशु और प्रौढ़ दोनों ही समूहों में क्षति करते हैं तथा प्रौढ़ की अपेक्षा शिशु ज्यादा नुकसान करते हैं। शिशु फलों व उनके डंठलों से रस चूसते हैं जबकि प्रौढ़ पत्तियों की निचली सतह पर नुकसान करते हैं। यह कीट पत्तियों पर एक मीठा रस छोड़ता है जिससे काली फंफूद आ जाती है और पत्तियाँ चिकनी हो जाती हैं। इसके शिशु 10 से 20 दिनों में बढ़कर प्रौढ़ बन जाते हैं। इसकी साल में दो पीढ़ियाँ होती हैं। पहली पीढ़ी (फरवरी से अप्रैल) बोर के समय होती है। दूसरी पीढ़ी (जून से अगस्त) पहली से ज्यादा हानिकारक है। दूसरी पीढ़ी के प्रौढ़ सघन, छायादार व नमी वाले स्थान पर शीतनिष्क्रिय रहकर फरवरी में सक्रिय हो जाते हैं। जहाँ पर पानी का जमाव हो या घने वृक्ष हों, वहाँ यह कीट अधिक मात्रा में होता है।

3. नियन्त्रण :

- निर्धारित संख्या से ज्यादा पेड़ नहीं लगाने चाहिए ताकि हवा व रोशनी प्रचुर मात्रा में बाग में प्रवेश कर सके। अनावश्यक पेड़ों व झाडियों को काट दें। यह भी सुनिश्चित करें कि बाग में पानी का जमाव न हो ताकि जरूरत से ज्यादा नमी न हो।
- बसंतकालीन फुटाव के तुरन्त बाद (फरवरी के आखिरी तक) 1.5 किलोग्राम कार्बेरिल (सेविन) 5 प्रतिशत घुलनशील पाऊडर या 500 मि.ली. मैलाथियान (सायथियान) को 500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इसे मार्च के अन्त में दोबारा भी छिड़कें।

1. कीट का नाम : आम का गोभ छेदक

2. हानि के लक्षण :

आम के छोटे कलम चढाए गए पौधों का यह मुख्य कीट है। पीले-नारंगी रंग की सूण्डियाँ शुरू में पत्तियों की मध्य शिराओं में छेद बनाकर व बाद में मुलायम प्ररोंहों (शूट्स) के बढ़ते हुए भागों के अन्दर सुरंग बनाकर 8-10 दिनों तक खाती रहती हैं। प्रकोपित प्ररोंहें सूख जाती हैं व पत्तियाँ गिर जाती हैं जिससे नई बढ़वार सूख जाती है। इसके छोटे व गोल प्रवेश द्वार से मलमूत्र आदि निकलता रहता है। इस कीट की 3-4 पीढ़ियाँ होती हैं। जुलाई से अक्तूबर तक यह सक्रिय रहता है जबकि नवम्बर से मार्च तक प्यूपा बनकर शीत निष्क्रिय रहता है।

3. नियन्त्रण :

- क्षतिग्रस्त टहनियों व प्ररोहों को तोडकर नष्ट कर दें।
- नई टहनियों व प्ररोहों पर 250 मि.ली. मिथाईल पैराथियान (मैटासिड) 50 ई.सी. या 1.0 किलोग्राम कार्बारिल (सेविन) 50 डब्ल्यू.पी. या 400 मि.ली. डाईमैथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. या 300 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस (नुवाक्रन) 36 डब्ल्यू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

ख) बिमारियां

1. सफेद चूर्णी रोग :

इसे कृषि विज्ञान की भाषा में पाऊडरी मिल्डयू के नाम से जाना जाता है। इस का प्रकोप पत्ते व फल दानों पर होता है परन्तु पत्तों पर प्रकोप कभी-कभी ही देखा जाता है। प्रकोपित फल अथवा पत्तों पर सफेद पाऊडर सा जमा हो जाता है। फलों की सतह खुरदरी व भूरे-काले रंग की हो जाती है। प्रभावित फल या तो गिर जाते हैं अन्यथा मण्डीकरण के लायक नहीं रहते और बागवानों को भारी आर्थिक हानि होती है।

नियन्त्रण :

- 1 ग्राम केराथेन या 2 ग्राम सल्फैक्स प्रति लीटर पानी के हिसाब से प्रथम छिड़काव फूल आने के पहले व दूसरा बेर मटर के दाने समान होने पर करें। आवश्यकतानुसार एक-दो छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर और करें।

2. काजली रोग :

इस रोग के प्रकोप से पंत्तियां पीली होकर गिर जाती हैं। पत्तियों की निचली सतह पर काले रंग का चूर्ण देखा जा सकता है।

नियन्त्रण :

- 3 ग्राम कापर आक्सीक्लोराइड (ब्लाईटाक्स-50, फाइटोलान आदि) प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

3. फल गलन :

फलों के निचले भाग पर हल्के भूरे धब्बे बनते हैं व धब्बों पर छोटे-छोटे काले दाने नजर आते हैं।

नियन्त्रण :

- जैसा कि काजली रोग में दिया गया है।

4. अल्टरनेरिया झुलसा रोग :

जनवरी-फरवरी में पत्तियों पर भूरे धब्बे बनते हैं और पत्तियां गिर जाती है।

नियन्त्रण :

- 1 ग्राम इण्डोफिल एम-45 प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव 15 के अन्तर पर दो बार करें।

5. टहनी मार रोग :

इस रोग का प्रकोप आम, नीबूवर्गीय फलों पर विशेष रूप से होता है। इसकी वजह से टहनियाँ ऊपर से सूख जाती हैं। पत्तों पर धब्बे पड़ जाते हैं और फल व तने भी गल जाते हैं।

नियन्त्रण :

- सूखी हुई टहनियों को काटकर 0.3 प्रतिशत कॉपर-ऑक्सीक्लोराइड के घोल को तीन बार छिड़कें। पहला छिड़काव अक्तूबर में दूसरा दिसम्बर में व तीसरा फरवरी में करें।

6. पद गलन या गूंद निकलने का रोग :

जमीन के पास नीचे तने की छाल सड़ जाती है जिससे अन्दर की लकड़ी मर जाती है व उसमें से गूंद सा निकलने लगता है।

नियन्त्रण :

- गूंद निकलने वाले भागों को कुरेद कर साफ करने के बाद वहाँ पर बोर्डो पेस्ट लगायें। दोबारा फिर एक सप्ताह बाद बोर्डो पेस्ट लगायें।

7. उक्ठा रोग (विल्ट) :

इस रोग की वजह से अमरूद के वृक्षों को काफी क्षति होती है। प्रकोपित पौधों में पत्तियों की संख्या बहुत कम हो जाती है। कई टहनियों में तो पत्तियाँ बिल्कुल खत्म हो जाती हैं। शुरू में पत्तियाँ पीली हो जाती हैं व बाद में पौधा सूख जाता है। इस रोग के लक्षण जड़ों के रोगग्रस्त हो जाने के बहुत दिनों बाद दिखाई देते हैं।

नियन्त्रण :

- ज्यादा भारी मिट्टी में पौधे न लगायें। बाग में पानी के निकास का सही प्रबन्ध होना चाहिए। ग्रसित पौधों को जड़ से उखाड़कर नष्ट कर दें। गड्ढ़ों को फारमेलिन से धूम्रित करके ही पौधे लगायें। जहाँ पर विल्ट की समस्या हो वहाँ सरदार (लखनऊ-49) किस्म लगायें। 15 ग्राम बाविस्टिन मार्च, जून व सितम्बर में हर पौधे के थावले में डाकर पानी लगा दें और मार्च व सितम्बर में 0.3 प्रतिशत जिंक सल्फेट का छिड़काव करें।

8. आम का गुच्छा-मुच्छा रोग (माल फोरमेशन)

इसमें फूलों के स्थान पर गुच्छे बन जाते है। गुच्छों में छोटी-छोटी हरी पत्तियाँ भी होती हैं।

नियन्त्रण

- रोगी बढ़वार काटकर कैप्टान 0.2 प्रतिशत तथा मैलाथियान 0.1 प्रतिशत के मिश्रण का छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर दो बार करें। सितम्बर के अन्त से अक्तूबर के मध्य तक 300 पी.पी.एम., एन.ए.ए. का छिड़काव करें। अगेते निकले फूल गुच्छों को काट दें।

9. गूंद निकलने वाला रोग (गम्मोसिस)

यह बिमारी नींबूवर्गीय फल, आडू आदि को नुकसान पहुँचाती है। इसमें जमीन की सतह से तने की छाल गल जाती है और अन्दर की लकड़ी मर जाती है। प्रभावित तनों से गूंद जैसा पदार्थ निकलने लगता है।

नियन्त्रण

- अक्तूबर, दिसम्बर व फरवरी में 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल का छिड़काव करें।

10. अंगूर का लाल धब्बे का रोग (एन्थ्रेक्नोज)

पत्तों एवं मध्य नसों और मुख्य नाड़ी के साथ गहरे भूरे रंग के भीतर की ओर धंसे हुए धब्बे बनते हैं। पत्तों के बाहरी किनारे लाल हो जाते हैं और टहनियों पर भी काले रंग के धब्बे प्रचुर संख्या में नजर आते हैं।

नियन्त्रण

- बेलों की सिफारिश अनुसार काट-छांट करें ताकि रोगग्रस्त भाग काट-छांट के समय निकल जाये। नीचे गिरे पत्तों को जमीन में गहरा दबा दें या जला दें। बेलों पर नए फुटाव से पूर्व 0.2 प्रतिशत बाविस्टीन का छिड़काव करें। नए पत्ते निकलने पर 0.2 प्रतिशत बाविस्टीन का फिर छिड़काव करें।

11. पत्ता मरोड़ रोग (लीफ कर्ल)

इस रोग से ग्रस्त पत्तियाँ छोटी एवं झुरीदार हो जाती हैं। पत्तियों में विकृति आ जाती है और इनकी शिराएँ पीली पड़ जाती हैं। पत्तियाँ नीचे की ओर मुड़ जाती हैं तथा बाद में गिर जाती हैं।

नियन्त्रण

- रोगी पौधों को उखाडकर जमीन में गहरा दबा दें या जला दें। बिमारी के लक्षण नजर आते ही कीटनाशकों का छिड़काव करें।

12. जस्ते की कमी (मोटल लीफ)

पत्तों की नसों के बीच का भाग सफेद-पीला हो जाता है। पत्तों का आकार छोटा हो जाता है।

नियन्त्रण

- 0.5 प्रतिशत जस्ते (जिंक सल्फेट) का छिड़काव साल में तीन बार अप्रैल, जून व सितम्बर में करें।

13. मौजेक

यह बिमारी वायरस द्वारा फैलती है। प्रभावित पौधों की पत्तियाँ छोटी व मुड़ी हुई दिखाई देती हैं।

नियन्त्रण

- इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. (0.1 प्रतिशत) का समय-समय पर छिड़काव करें।

14. तना गलन (कालर रॉट)

इस रोग का प्रकोप वर्षा ऋतु या नमी की अधिकता होने पर अधिक होता है जिससे जडें व जमीन की सतह से तना गलने लगता है। बिमारी का प्रकोप अत्यधिक होने पर फल छोटे रह जाते हैं और पौधे मर जाते हैं।

नियन्त्रण

- वर्षा या सिंचाई का पानी तने के सीधे सम्पर्क में नही आना चाहिए। इसके लिए पौधों के तनों के चारों और मिट्टी चढ़ा दें। रोगी पौधों को तुरन्त उखाड़कर दबा दें या जला दें।

15. सूत्रकृमि

अंगूर : बेलों में फुटाव कम होता है। टहनियाँ व पत्ते छोटे रह जाते हैं व पत्ते पीले होकर गिर जाते हैं। जड़ों में गांठें बन जाती हैं। अत्यधिक प्रकोप होने पर जड़ें गलने लगती हैं।

नींबू : पौधों के पत्ते व टहनियाँ ऊपर से नीचे की ओर सूखने लगती हैं। पौधे कमजोर हो जाते हैं और फूल-फल समय पूर्व गिरने लगते हैं। जडें विकृत हो जाती हैं व अधिक प्रकोप होने पर जड़ों से छिलका उतर जाता है।

नियन्त्रण

- प्रति पौधा 7-13 ग्राम फ्यूराडान (कार्बोफ्यूरान 3 जी) प्रति वर्ग मीटर क्षेत्र में तनों के चारों ओर डालें और तुरन्त सिंचाई करें। दवा का प्रकोप फुटाव से एक सप्ताह पूर्व करें।

नोट :

1. किसी भी दवा का छिड़काव करते समय सिफारिश की गई मात्रा का ही प्रयोग करें।
2. रोग के लक्षण नजर आते ही छिड़काव करें।
3. छिड़काव के बाद फल तोड़ने के लिए निर्धारित समय का अन्तर अवश्य रखें।
4. छिड़काव करते समय पूरा पौधा तर हो जाना चाहिए अर्थात पौधों के पत्तों से पानी टप-टप गिरने लगे।
5. केवल बारीक फौहरे से छिड़काव करें।
6. कीट अथवा फफूंदीनाशक जहर हैं इनका प्रयोग आवश्यकता पड़ने पर ही करें।
7. प्रकोप होने पर बागवानी विशेषज्ञों से परामर्श के बाद ही छिड़काव/नियन्त्रण उपाय अपनाएं।

पुष्प-उत्पादन

फूलों का मानव जीवन में एक विशिष्ट स्थान है। समाज में कोई भी ऐसा समारोह नहीं जो फूलों के बिना पूरा हो सके। घरेलू खपत के अतिरिक्त विदेशों में फूलों की अत्याधिक मांग है, विशेषकर यूरोप, अमेरिका व अरब देशों में। परन्तु यह अति दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति ही कही जाएगी कि इतने बड़े स्तर पर राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय बाजार उपलब्ध होने के बावजूद भारतवर्ष का अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर फूलों की खेती में कोई स्थान नहीं है जबकि कीनिया व कोलबिया जैसे देश विश्व बाजार में अग्रणी हैं। हमारे देश में वर्ष भर अनेक प्रकार के फूलों के उत्पादन के लिए जलवायु अनुकूल है जिसका लाभ उठाकर हमारे किसान पुष्पों के निर्यात से अपनी आय कई गुणा तक कर सकते हैं व देश के लिए विदेशी मुद्रा जुटाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। हमारे देश में फूलों की खेती के प्रसार की अपार सम्भावनाओं के बावजूद निम्नलिखित समस्याएं क्षेत्रफल बढ़ने में मुख्य बाधा हैं।

- जैव विविधता की पहचान व संरक्षण में लापरवाही।
- अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की मांग के अनुरूप उच्च गुणवत्ता की वांछित नस्लों/किस्मों को प्रोत्साहन व आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने में रूचि न दिखाना।
- किसानों को फूलों की खेती की नवीनतम तकनीकी जानकारी न होना।
- किसानों द्वारा इसे व्यवसाय के रूप में न देखना।
- अन्य देशों की तुलना में जहाज भाड़े दर अधिक होना।
- क्यूरेंटाइन से निरीक्षण में देरी के फलस्वरूप निर्यातकों को होने वाली हानि।
- मूलभूत सुविधाओं का अभाव।

भारत में पुष्प उत्पादन में अग्रणी राज्य (2001-02)

राज्य	उत्पादन (मी. टन)
तमिलनाडू	1,56,700
महाराष्ट्र	30,376
कर्नाटक	1,38,776
दिल्ली	25,007
आन्ध्र प्रदेश	1,21,336
हरियाणा	17,890
पश्चिमी बंगाल	31,267
उत्तर प्रदेश	3,400

स्त्रोत : राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, गुड़गांव

भारत में फूलों के अन्तर्गत क्षेत्र (000 हक्टेयर) व उत्पादन (खुले फूल : 000 मी. टन व पुष्प डण्डी सहित : दस लाख में)

वर्ष	क्षेत्रफल	उत्पादन	
		खुले फूल	पुष्प डण्डी सहित
1998-1999	74	419	643
1999-2000	89	509	681
2000-2001	98	556	804
2001-2002	106	535	3565

राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली के समीप होने के कारण हरियाणा विशेषकर झज्जर, गुड़गांव, फरीदाबाद, सोनीपत व रोहतक के किसान फूलों की खेती अपनाकर अपनी कृषि आय को कई गुणा तक बढ़ा सकते हैं। इसके फलस्वरूप उन्हें परिवहन में हवाई अड्डे/स्थानीय मण्डी तक माल पहुंचाने में न्यूनतम समय व पैसा लगेगा।

विश्व व्यापार में अग्रणी पुष्प :

गुलाब, कारनेशन, गुलदावदी, जरबैरा, ग्लेडियोलस, अन्यूरियम, आर्किड, लिलियम, स्टेटिस, स्टाक आदि (वरीयताक्रम अनुसार)

विश्व व्यापार में अग्रणी गमले वाले पौधे :

कैलैन्चो, हैडरा, बरगद-पीपल परिवार, गुलदावदी, डैसीना, गुलाब, हाईसिन्थ (कुम्मी), प्रायमुला, विगोनिया।

विश्व में पुष्प-उत्पादन में अग्रणी देश :

हॉलैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, कोलम्बिया, जर्मनी, वेन्जुएला।

विश्व में सर्वाधिक खपत करने वाले देश :

जर्मनी, हालैण्ड, अमेरिका, कोलम्बिया, जापान, इंगलैण्ड

सबसे बड़े निर्यातक :

हालैण्ड, अमेरिका, जापान, कोलम्बिया, वेन्जुएला

गेंदे के लिए पौधरोपण में विभिन्न समय व उनके अनुसार फूलों की उपलब्धि की अवधि

महीना/पोध रोपण की तिथि	फूल आने में लगा समय (दिन)	फूलों की उपलब्धि की अवधि
1 जुलाई	67	6 सितम्बर-20 नवम्बर
2 अगस्त	53	22 सितम्बर-नवम्बर
1 सितम्बर	50	20 अक्टूबर-5 जनवरी
1 अक्टूबर	59	29 नवम्बर-2 मार्च
1 नवम्बर	62	2 जनवरी-20 मार्च
30 जनवरी	53	25 मार्च-25 मई
15 फरवरी	54	87 अप्रैल-25 मई
15 मार्च	63	18 मई-20 जुलाई
1 अप्रैल	64	20 जून-5 अगस्त

रजनीगन्धा

रजनीगन्धा (पॉलिएन्थस टयूबरोसा), अगेवेसी कुल की एक महत्वपूर्ण फूल वाली फसल है जिसे फूल व फलों से प्राप्त होने वाले सुगन्धित तेल के लिए लगाया जाता है। भारत में इसकी खेती अधिकतर बड़े शहरों जैसे दिल्ली, बंगलौर, नासिक, कलकत्ता इत्यादि या इसके आस-पास ही की जाती है। इसके फूल 30-75 सैं.मी. लम्बे होते हैं जिसे स्पाइक कहते हैं जिस पर 10-20 कलियां होती हैं।

उपयोग :

इसके फूल अधिकतर कटफलावर के रूप में प्रयोग होते हैं और पुष्पदान में इसका तोड़ाई उपरान्त जीवन 7-10 दिन होता है। इससे मालाएं, वेणी, गजरा व गुलदस्ते भी बनाए जाते हैं व अति मूल्यवान सुगन्धित तेल भी प्राप्त होता है जिसका प्रयोग अनेक उद्योगों में होता है।

मिट्टी एवं जलवायु :

सामान्यत: इसे सभी प्रकार की भूमि पर लगाया जा सकता है। परन्तु अच्छी जल निकासी वाली उपजाऊ मिट्टी जिसका खारी अंग 6-7 हो, उत्तम रहती है। इसके लिए मध्यम तापमान (20-300 सैल्सियस) वाली जलवायु उत्तम है हालांकि इसे ठण्डी से अति गर्म जलवायु तक लगा सकते हैं।

किस्में :

इसकी मुख्यत: दो प्रकार की किस्में हैं - सिंगल व डबल।

खेत की तैयारी, रोपण का समय व विधि :

खेत की तैयारी करते समय 20-25 टन गली-सड़ी देसी खाद डालें। अन्तिम जुताई से पहले 50 किलोग्राम नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश डालें। जमीन भुरभुरी होना चाहिए व उसमें बड़े ढ़ेलें इत्यादि नहीं होने चाहिएं। कंदों की रोपाई के लिए मार्च-अप्रैल उत्तम समय है। कंद (2.5-3.0 सैं.मी. व्यास) कतार से कतार व कंद से कंद 30 सैं.मी. फासला रखकर 5 सैं.मी. गहरे बोने चाहिए। बिजाई के समय पर्याप्त नमी होना अनिवार्य है।

उर्वरक :

नत्रजन की शेष बची आधी मात्रा (50 किलोग्राम) बिजाई के 60 दिन बाद खड़ी फसल में डालकर सिंचाई करें।

कीट व बिमरियां :

चूरड़ा (थ्रिप) के अतिरिक्त इस पर किसी कीट या बीमारी का प्रकोप नहीं होता, जिसे 1 मि.ली. एण्डोसल्फान 35 ई.सी. प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करके नियन्त्रित किया जा सकता है।

फूलों की कटाई :

बिजाई के लगभग 85-90 दिन के बाद स्पाइक निकलनी शुरू होती है जो जुलाई-अगस्त में अधिक निकलती है व दिसम्बर तक चलती रहती है। फूलों की कटाई जमीन से 4-6 इंच ऊपर करनी चाहिए। स्पाइक काटते समय सबसे नीचे वाली दो कली पूर्णत: खिली होनी चाहिएं। फूलों को काटकर तुरन्त बाल्टी में रखें जिसकी तली में थोड़ा ठण्डा पानी हो। तत्पश्चात् इनके एक अथवा दो दर्जन के बण्डल बनाकर यथाशीघ्र विपणन करें। यदि विपणन पूर्ण भण्डारण करना हो तो ठण्ड़े स्थान पर रखें। जनवरी-फरवरी में पौधों के पत्ते सूखने लगते हैं। इस समय सिंचाई बन्द कर दें व नई पत्तियां आने पर खाद डालकर सिंचाई करें। एक बार बिजाई करने पर फसल 3-4 साल तक चलती है।

आसवन :

फूलों के जल आसवन से तेल प्राप्त होता है। इसमें तेल की मात्रा 0.6-0.7 प्रतिशत होती है तथा 12-17 लीटर तेल प्राप्त होता है।

उपज व आय :

फूलों की उपज 6-7 टन प्रति हैक्टेयर होती है और 2-3 टन कंद प्राप्त होते हैं। फूलों का भाव 24-120 रूपये प्रति दर्जन तक रहता है।

गुलाब :

गुलाब (रोजा डैमेसिना) फूलों का राजा है जो रोजेसी कुल का पौधा है। इनमे डेमास्क गुलाब सबसे अधिक सुगन्धित है। भारत में इसकी खेती मुगलकाल से की जाती है। पूरे विश्व में गुलाब के फूलों व तेल की अत्यधिक मांग है।

उपयोग :

गुलाब के फूलों के अनेक उपयोग हैं। फूलों की पंखुड़ियां श्रद्धा सुमन अर्पित करने के अतिरिक्त माला बनाने में भी प्रयुक्त होती हैं। फूलों से गुलदस्ते बनाकर या कट फ्लावर प्रियजनों को भेंट किये जाते हैं। औद्योगिक स्तर पर गुलाब जल, गुलकन्द व सुगन्धित तेल निकालने में प्रयोग होता है। तेल से इत्र तैयार किया जाता है व अन्य अनेक उत्पाद जैसे साबुन, तेल, सौन्दर्य प्रसाधनों तथा खाद्य पदार्थों आदि में भी प्रयोग किया जाता है।

मिट्टी एवं जलवायु :

इसे सभी प्रकार की उपजाऊ भूमि पर लगाया जा सकता है किन्तु दोमट मिट्टी उत्तम है। खेत में प्रचुर जीवांश व जल निकासी का अच्छा प्रबन्ध होना अनिवार्य है। इसे मैदानी व पहाड़ी दोनों क्षेत्रों में लगा सकते हैं। अति निम्न तापमान में यह सुप्तावस्था में रहता है। उत्तम बढ़वार एवं फूलन के लिए 25-30 सैल्सियस तापमान अच्छा होता है। छांयादार स्थानों पर इसका रोपण न करें क्योंकि इसे पूरा दिन खुली धूप की आवश्यकता होती है।

ज्वाला, हिमरोज व नूरजहां डेमस्क गुलाब की अधिक तेल वाली किस्में हैं जो व्यावसायिक खेती में लोकप्रिय व अग्रणी है।

पौध प्रवर्धन :

पौध प्रवर्धन मुख्यत: कलम व टी विधि से चश्मा चढ़ाकर किया जाता है। एक साल पुराने तने से 15 सैं.मी. लम्बी कलम मई-जून व अक्टूबर-नवम्बर में काट-छांट के समय बनाएं व पौधशाला में लगाएं। एक वर्ष बाद पौधे तैयार हो जाते हैं। रोजा इण्डिका के मूलवृन्त तैयार करके ही टी-विधि से चश्मा चढ़ाकर कलमी पौधे प्राप्त होते हैं। चश्मा चढ़ाने के लिए जनवरी-मार्च का समय उत्तम है।

पौधारोपण का समय एवं विधि :

पौधारोपण के लिए जुलाई-अगस्त व नवम्बर-जनवरी का समय उत्तम है। ऊंची बढ़ने वाली किस्में 60 सैं.मी. पौधे से पौधा व 75 सैं.मी. कतार से कतार व कम बढ़ने वाली 45 x 30 सैं.मी. की दूरी पर रोपें। आम तौर पर एक हैक्टेयर में 41760 पौधे लगने हैं।

काट-छांट :

मई-जून व अक्टूबर-नवम्बर में काट-छांट करने से फूल अधिक लगते हैं। काट-छांट के समय सूखी, फटी, बीमार, रोग्रस्त, मुड़ी हुई व कमजोर शाखाएं निकाल दें व जलाकर नष्ट करें।

खाद व उर्वरक :

खेत तैयार करते समय 5-10 किलोग्राम गली-सड़ी देसी खाद व 100 ग्राम नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से डालें। खेत तैयार करके उठी हुई शैया (क्यारियां) बनाएं तत्पश्चात् 30 कि.ग्रा. नत्रजन व 20 कि.ग्रा. फास्फोरस और पोटाश प्रति हैक्टेयर सिंचाई के समय दें। गर्मी में 20 कि.ग्रा. नत्रजन फूल बनने से कुछ पहले दें।

सिंचाई :

ध्यान रहे कि क्यारियों में उचित नमी निरन्तर बनी रहे। गर्मी में एक सप्ताह व सर्दियों में तीन-चार सप्ताह के अन्तराल पर सिंचाई करें। जल निकासी का हर समय उत्तम प्रबन्ध होना चाहिए।

निराई-गुड़ाई :

समय पर निराई-गुड़ाई अति अनिवार्य है। इससे खरपतवार भी नियन्त्रित रहती है और जड़ों की श्वास प्रक्रिया उत्तम बनी रहती है।

कीट एवं नियन्त्रण

कीटों का प्रकोप कल बनने व खिलने के समय अधिक होता है।

स्केल कीट

इसका प्रकोप अगस्त-सितम्बर में होता है। ये पत्तों से रस चूसते हैं। नियन्त्रण के लिए 1 मि.लि. रोगोर 30 ई.सी. अथवा मैटासिस्टॉक्स 25 ई.सी. प्रति लीटर पानी का घोल छिड़कें।

गुलाब का चापर

जुलाई-अगस्त में ये रात्रि में नुकसान करते हैं। नियन्त्रण के लिए लिण्डेन 2 प्रतिशत का धूड़ा करें अथवा 1 मि.लि. एण्डोसल्फान 35 ई.सी. प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

हरा तेला

ये पत्तियों से रस चूसते हैं। नियन्त्रण हेतु 1 मि.लि. रोगोर 30 ई.सी. प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

दीमक

यह अत्यन्त विनाशकारी कीट है, जो लगभग सभी फसलों को हानि पहुंचाता है। इसके नियन्त्रण के लिए बिजाई अथवा रोपण से पहले या खड़ी फसल में 1-2 लीटर एण्डोसल्फान 35 ई.सी. या क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. सिंचाई के साथ या 15-20 किलो बारीक बालू रेत में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़ककर सिंचाई करें।

बिमारियां एवं रोकथाम

टहनीमार रोग : टहनियां ऊपर से सूखनी शुरू होती हैं और बीमारी नीचे की ओर बढ़ती है व पौधा मर जाता है। लक्षण नजर आते ही टहनियों के सूखे भाग के साथ कुछ (1 इंच) हरा भाग तक काट दें व ब्लाईटाक्स या बोर्डो पेस्ट लगाएं। 15 दिन बाद 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

काले धब्बों का रोग : काट-छांट के समय रोगग्रस्त शाखाएं निकालकर 0.2 प्रतिशत बावीस्टीन का छिड़काव करें। फसल के दौरान लक्षण नजर आने पर इसी फफूंदी नाशक का छिड़काव करें।

फूलों की तोड़ाई

पूर्ण विकसित फल प्रातः या सायंकाल में तोड़ें व एक बाल्टी में एकत्र करें। तत्काल ठण्डे स्थान पर रखें और यथाशीघ्र विपणन करें।

उपज व लाभ

फूलों का उत्पादन 1500-2000 किलो प्रति हैक्टेयर होता है, जिसमें 0.35-0.50 प्रतिशत तेल होता है। इस प्रकार 0.4 किलोग्राम शुद्ध तेल प्राप्त होता है। जिसका मूल्य 2,50,000 रूपये प्रति किलोग्राम है।

गेंदा

गेंदा (टेगेटस पैटुला, टेगेटस इरैक्टा) एक व्यावसायिक फूलों वाली फसल है जिससे उच्च कोटि का इत्र तैयार होता है। यह एक अति सहनशील पौधा है। भारत में यह अनेक प्रान्तों में लगाया जाता है।

उपयोग

चूंकि इसके फूलों की तोड़ाई उपरान्त जीवन बहुत अधिक होता है। फूल विवाह-शादी, पूजा-पाठ व अन्य समारोह में मालाएं बनाने में प्रयोग होते हैं। इसके फूलों से रंग भी प्राप्त होता है जिसे खाद्य पदार्थ रंगने, विभिन्न रंग बनाने, बेकरी उद्योग व मुर्गीदाने में प्रयोग किया जाता है। फूलों से उच्च कोटि का इत्र बनाया जाता है व तने और पत्तों से तेल प्राप्त होता है।

मिट्टी एवं जलवायु

गेंदा सभी प्रकार की भूमि पर लगाया जा सकता है। परन्तु दोमट मिट्टी जिस पर जल निकासी का अच्छा प्रबन्ध हो, इसके लिए उत्तम है। यह सभी प्रकार की जलवायु में लगाया जा सकता है, परन्तु शीतोष्ण व उपोष्ण क्षेत्रों में उपज बहुत कम होती है। हरियाणा प्रदेश की जलवायु उत्तम है।

किस्में

फूलों की खेती के अर्न्तगत देखें।

खेत की तैयारी, बीज की मात्रा व बिजाई की विधि

प्रति एकड़ 8-10 टन गली सड़ी खाद डालकर खेत की 2-3 जुताई करें व क्यारियां बना लें। पौध तैयार करने के लिए बीज पौधशाला में जून के आरम्भ में बोना चाहिए। निरन्तर फूल प्राप्ति के लिए 15-30 दिन के अन्तर पर पौधाशाला में बिजाई व खेत में पौध रोपण करते रहना चाहिए। एक मास पुरानी पौध रोपण करने के लिए उचित होती है। एक एकड़ के लिए 150-200 ग्राम बीज पर्याप्त रहता है। खेत में पौधारोपण, पौधे से पौधा 30 सैं.मी. व कतार से कतार 45 सैं.मी. का फासला रखकर करना चाहिए। रोपाई शाम के समय या बूंदा-बांदी और बादलों वाले मौसम में करें। रोपाई के तुरन्त बाद सिंचाई करें।

उर्वरक

अन्तिम जुताई से पहले प्रति हैक्टेयर 60 किलोग्राम नत्रजन व 50 किलोग्राम फास्फोरस व पोटाश डालें। रोपण के 30-40 दिन बाद 10-15 किलोग्राम नत्रजन खड़ी फसल में छिड़क कर सिंचाई करें।

सिंचाई

मिट्टी व मौसम के अनुसार सिंचाई आवश्यक है। सर्दियों में 10-15 दिन में सिंचाई करें।

निराई-गुड़ाई

खरपतवार नियन्त्रण, पौधों की तेज वृद्धि व जल्दी फूल लेने के लिए आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई करें।

शीर्ष चुटकना (पिंचिंग)

खेत में रोपण के 35-40 दिन बाद पौधों के शीर्ष तोड़ देने चाहिए। इस प्रक्रिया को पिंचिंग कहते हैं। इससे मुख्य तने की सीधी बढ़वार रूक जाती है और चारों ओर से अनेक फुटाव निकलते हैं व फूलों की अगेती अधिक पैदावार मिलती है।

तोड़ाई व कटाई

फूलों की तोड़ाई सुबह या सायंकाल में करें व ठण्डे तथा हवादार स्थान पर एकत्र करें। यथाशीघ्र विपणन करना चाहिए। तेल के पौधों को पूर्ण विकसित होने पर ही काटें।

उपज व आय

किस्म, जलवायु व फसल प्रबन्ध के मदेनज़र 50-60 क्विंटल प्रति हैक्टेयर फूल व 20-25 टन हरा पत्ता व तना प्राप्त होता है। पत्तियों व तने के आसवन से 50-60 किलोग्राम तेल प्राप्त होता है। मांग व आपूर्ति अनुरूप फूल 2-60 रूपये प्रति किलो तथा तेल 200-300 रूपये प्रति किलोग्राम तक बिकता है।

गुलदावदी

मिट्टी एवं जलवायु

गुलदावदी की खेती के लिए दोमट मिट्टी उत्तम होती है जो नमी रोकने में समर्थ होने के साथ-2 आवश्यक वायु-संचार भी बनाये रखती है। मिट्टी का खारी 6.2 से 7.0 तक होना

चाहिए। मूलतः यह ठण्डे मौसम में फूल पैदा करता है और रोशनी की अवधि पर फूल उत्पादन, व्यावसायिक स्तर पर निर्भर होता है।

पौध प्रवर्धन

गुलदावदी के पौधे कलम से तैयार किये जाते हैं। इसके लिए मातृ पौधे नियन्त्रित अवस्था में 21-27 सैल्सियस तापमान पर तैयार किये जाते हैं। हरित घर में 100 वाट प्रति वर्ग मीटर अतिरिक्त रोशनी देने से 43-102 प्रतिशत तक अधिक कलम प्राप्त होती हैं। मातृ पौधों से 4-6 सैंटीमीटर लम्बी कलम पौधों के शीर्ष से जून-जुलाई में काटनी चाहिए व इन्हे तत्काल नर्सरी में लगाना चाहिए। नर्सरी में लगाने से पूर्व कलमों के निचले 0.5-1.0 सैं.मी. भाग को कैप्टान या थिरम नामक फफूंदी नाशक व 2000 पी.पी.एम. इण्डोल ब्यूआयरिक अम्ल से उपचारित करना चाहिए। 20-25 दिन में कलमों में जड़ बन जाती हैं।

इसके अतिरिक्त रोगमुक्त पौधों से फूल तोड़ने/काटने के बाद निकलने वाले अनेक सकरस को उनके शीर्ष पर 5-6 हरी पत्तियां आने के बाद अलग करना चाहिए। तत्पश्चात सकरस को सीधे खेत अथवा हरित घर में लगाया जाता है। आजकल इसके पौधों सूक्ष्म प्रवधन से भी तैयार किये जाते हैं।

पौधों के बीच दूरी

गुलदावदी को प्रायः 30-20 सैं.मी. पंक्ति से पंक्ति व पौधे से पौधा फासले पर लगाया जाता है। इसे 20 x 20 सैं.मी. दूरी पर भी लगा सकते हैं परन्तु फासला घटाने से फूलों की गुणवता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

खाद व उर्वरक

जून मास में खेत की अन्तिम जुताई से पूर्व 5-10 टन देसी खाद अथवा कम्पोस्ट, 100 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट, 125 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश व 200 कि.ग्रा. किसान खाद डालनी चाहिए। नत्रजन (किसान खाद) की शेष 450 कि. ग्रा. मात्रा पौध रोपण के बाद 30 दिन के अन्तराल पर तीन बार में देनी चाहिए। खाद डालने के बाद तत्काल सिंचाई आवश्यक है। हरित घर में खाद टपका-टपका प्रणाली से सिंचाई के जल के साथ दिया जाता है।

सिंचाई

फसल को मिट्टी व जलवायु के अनुरूप आवश्यकता अनुसार सिंचाई देनी चाहिए। आमतौर पर दोमट मिट्टी की अवस्था में सिंचाई 8-10 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए। कुल 25-40 सिंचाईयों की आवश्यकता पड़ती है।

निराई-गुड़ाई व खरपतवार नियन्त्रण

भरपूर उत्पादन के लिए सिंचाई के बाद बत्तर आने पर 4-5 निराई-गुड़ाई आवश्यक हैं ताकि जड़ों तक पर्याप्त वायु संचार सुनिश्चित हो सके व साथ ही खरपतवार नियन्त्रण भी हो सके।

सहारा देना

खेत अथवा हरित घर में पौधों के स्थापित होने के बाद बांस की सोटी आदि से सहारा देना चाहिए। इसकी कुछ किस्मों को सहारा देने की आवश्यकता नहीं होती।

शीर्ष चुटकना व कलियां तोड़ना

रोपण के 4 से 7 सप्ताह में पौधों के शीर्ष चुटकने की प्रक्रिया से पौधों पर पार्श्व शाखाएं अधिक निकलती हैं व उत्पादन में वृद्धि होने के साथ-2 फूल भी अगेते आते हैं। इसके विपरीत पौधों से कुछ कलियां तोड़ देने से फूलों की संख्या सीमित हो जाती है और फूलों के आकार में वृद्धि होती है और फूलों को अधिक भाव मिलता है परन्तु पैदावार में कमी होती है। कलियां न तोड़ने की अवस्था में अत्यधिक फूल लगने के कारण फूल छोटे रह जाते हैं।

पौध वृद्धि व फूलन का नियन्त्रण

गुलदावदी की वृद्धि व फूलन के लिए उचित तापमान, रोशनी व अन्य कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके

फूलन के लिए रात्रि की लम्बाई 9.30 घण्टे से कम होनी चाहिए अन्यथा पौधों की बढ़वार जारी रहती है व फूल नहीं आते। इसके लिए 16^0 सेल्सियस तापमान उत्तम है व 10^0 से नीचे जोन पर बढ़वार कम हो जाती है। वैज्ञानिक कैथी ने विभिन्न किस्मों को तापमान के आधार पर निम्न श्रेणीयों में बांटा है।

क. थर्मोजीरो

वे किस्में जिनमें 10-27^0 सेल्सियस के बीच फूल आ सकते हैं परन्तु 17^0 रात्रि तापमान उत्तम है।

ख. थर्मोपॉजिटिव

निरन्तर 10 से 13^0 सेल्सियस तापमान पर फूल नहीं आते या देरी से आते हैं। 27^0 सेल्सियस तापमान पर कलियां तेजी से बनती हैं परन्तु फूल देरी से खिलते है।

ग. थर्मोनेगेटिव

10 से 27^0 सेल्सियस के बीच कलियां बनती रहती हैं परन्तु 17^0 सेल्सियस निरन्तर उच्च तापमान से फूल देरी से खिलते है। पौधों की अत्यधिक बढ़वार को रोकने के लिए शीर्ष चुटकने के 2-3 सप्ताह बाद 2000-4000 पी.पी.एम., एस.ए.डी.एच. नामक रसायन छिड़कने से बढ़वार रूक जाती है या इसके लिए 1.25-1.50 प्रतिशत साइकोसिल (सी.सी.सी.) का छिड़काव करें।

कीट एवं बीमारियां

क. कीट

1. तेला : यह हरे रंग का छोटा-सा कीट है जो रस चूसता है। नियन्त्रण के लिए 250 मि.ली. मैटासिस्टाक्स या रोगोर 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

2. सफेद चूर्णी रोग : पत्तों पर सफेद चूर्ण सा जमा हो जाता है। नियन्त्रण के लिए 0.1 प्रतिशत कैराथेन या 0.2 प्रतिशत सल्फैक्स का छिड़काव करें।

3. उखेड़ा : नियन्त्रण के लिए 0.1 प्रतिशत बावीस्टीन का छिड़काव करें।

ग्लेडियोलस

मिट्टी एवं जलवायु

इसके लिए उपजाऊ एवं उत्तम जल निकासी वाली दोमट मिट्टी उपयुक्त है। चिकनी मिट्टी की अवस्था में पर्याप्त देसी खाद डालने के बाद ही इसकी खेती करे। खारी अंग (पी. एच.) के आसपास होना अनिवार्य है। इसके लिए 16-30^0 सेल्सियस तापमान उत्तम है। इसके लिए 7^0 सेल्सियस से नीचे व 32^0 सेल्सियस से ऊपर तापमान पौध वृद्धि व विशेष तौर पर पुष्प उत्पादन में बाधक है। मूलतः यह शीत ऋतु की फसल है। इसे लम्बे दिन व तीव्र रोशनी की जरूरत होती है।

लगाने का समय एवं दूरी

घरेलू एवं अन्तर्राट्रीय बाजार में इसकी मांग को देखते हुए आजकल अप्रैल से जून तक के समय को छोड़कर पूरे वर्ष बिजाई की जाती है और वर्ष भर ही इसके फूल उपलब्ध रहते हैं। जुलाई से दिसम्बर मैदानी क्षेत्रों में व मार्च से अप्रैल पहाड़ी क्षेत्र में लगाने के लिए उपयुक्त समय है। किस्मों का चुनाव सावधानी पूर्वक करना चाहिए क्योंकि विभिन्न किस्मों की तापमान की आवश्यकताएं भिन्न-भिन्न हैं। इसे 15-30 दिन के अन्तर पर बार-2 लगाने से निरन्तर फूल मिलते रहते हैं।

पौधे से पौधा 20 सैं.मी. व पंक्ति से पंक्ति 30 सैं.मी. फासला उचित है। उत्तम गुणवत्ता के फूल प्राप्त करने के लिए कम से कम 5 सैं.मी. व्यास के कंद 0.2 प्रतिशत बावीस्टीन के टैंक में 15-30 मिनट डुबोने के बाद ही लगाना चाहिए। कंद

5-7 सैं.मी. की गहराई पर लगाने चाहिए। प्रति एकड़ 60000-80000 पौधों का समावेश किया जा सकता है।

खेत की तैयारी खाद एवं उर्वरक

दो-तीन बार खेत की गहरी जुताई करें। अन्तिम जुताई से पूर्व 10-20 टन देसी खाद 250 किलो सिंगल सुपर फास्फेट व 65 किलो ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश डालनी चाहिए। तत्पश्चात सुविधाजनक आकार की क्यारियां बनाकर उनमें उचित दूरी पर कंदों की बिनाई करें। मिट्टी जनित फफूंदियों से होने वाली बिमारियों से बचने के लिए हर वर्ष उसी खेत में इसकी बागवानी न करें। रोपण के 30 दिन बाद, 3 पत्तियां व 6 पत्तियां आने पर हर 80-85 कि.ग्रा. किसान खाद का प्रयोग करे। 6 पत्तियां आने पर 65 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश भी डालना चाहिए।

सिंचाई

सिंचाई की आवश्यकता मिट्टी एवं जलवायु पर निर्भर करती है। दोमट मिट्टी की अवस्था में 7-10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करें।

निराई-गुड़ाई एवं खरपतवार नियन्त्रण

अधिक उत्पादन एवं उत्तम गुणवता के लिए फसल अवधि के दौरान 4-5 बार निराई-गुड़ाई करना आवश्यक है। जिसके खरपतवार नियन्त्रण भी हो जाता है। निराई-गुड़ाई के समय पौधों के चारों ओर मिट्टी चढ़ाना जरूरी है। रासायनिक खरपतवार नियन्त्रण के लिए 1 लीटर बैसालिन प्रति एकड़ खेत तैयार करने के बाद कंदों के रोपण से पहले छिड़कनी चाहिए।

पुष्प-उत्पादन

आमतौर पर अधिकतर व्यावसायिक किस्में एक पुष्प डण्डी होती है। अनेक ऐसी किस्में है जो समय-समय पर अधिक पुष्प डण्डियां देती हैं। अतः कुछ पुष्प डण्डियों (स्पाइक्स) की संख्या पौधों की संख्या व प्रति पौधा पुष्प डण्डियों की संख्या पर निर्भर है।

फूलों की तोड़ाई

पुष्प डण्डी पर सबसे नीचे वाली कली के नीचे से इस प्रकार काटें कि पौधे पर कम से कम चार पत्ते रह जाएं। कटाई ठण्डे मौसम में सुबह या सांय करें। काटने के लिए तेज धारदार चाकू अथवा ब्लेड का प्रयोग करें।

फूलों की पैकिंग

साधारणतः 100 x 25 x 10 सैं.मी. आकार के गत्ते के डिब्बे प्रयोग किये जाते हैं।

कंदों की खुदाई

पौधों से फूल काटने के 5-6 सप्ताह बाद जब पौधों पर पत्तें सूख जाएं तो कंदों को नन्ही कंदों के साथ खोद लें व बड़ी कंदों व बच्ची कंदों को अलग करे। कंदों की खोदाई से 2-3 सप्ताह पहले सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए। तत्पश्चात उन्हें एक सप्ताह तक छाया में सुखाने के बाद बावीस्टीन 0.2 प्रतिशत के घोल में 15-30 मिनट डुबोने के बाद सुखाकर हवादार स्थान पर या शीत गृह में भण्डारण करें।

कीट एवं बिमारियां

क. कीट

ग्लेडियोलस पर किसी भी कीट का विशेष प्रकोप नहीं होता।

ख. बिमारियां

उखेड़ा

यह ग्लेडियोलस की विनाशकारी बीमारी है। इससे ग्रसित होने पर दरांती के आकार के पत्ते निकलते हैं जिन पर लाल-2 धब्बे निचले भाग पर नजर आते हैं व फल स्वरूप पत्ते पीले हो जाते हैं और पूरा पौधा मर जाता है। इसके नियन्त्रण हेतु निम्न उपाय अपनाएं।

- खेत की मई-जून में गहरी जुताई करें।
- केवल स्वस्थ व फफूंदी मुक्त कंदों का प्रयोग करें।
- रोपण पूर्व कंदों को 0.2 प्रतिशत बावीस्टीन के घोल में 15-30 मिनट डुबोएं।
- रोग के लक्षण नजर आते ही पूरे खेत अथवा हरित गृह में 0.2 प्रतिशत बावीस्टीन का जड़ को निशाना बनाकर छिड़काव करें।
- कंदों को भण्डारण पूर्व 0.2 प्रतिशत बावीस्टीन से उपचारित करें।
- बच्ची कंदों से तैयार कंदों को रोपण के प्राथमिकता दें।

- रोपण पूर्व कंदों को 570 सेल्सियस तापमान पर 30 मिनट तक पानी से उपचारित करें।
- एक ही खेत में बार-2 रोपण न करें।
- मिट्टी को फॉरमैलिन का छिड़काव करके काली पोलीथीन की चद्दर से एक सप्ताह ढ़क कर रखें।

कंद गलन

इसके फलस्वरूप भण्डारण के दौरान कंद गल-सड़ जाते हैं। उपाय हेतु निम्न कदम उठाएं :

- भण्डारण पूर्व ही रोग ग्रस्त कंदों की छंटनी कर दें।
- भण्डारण पूर्व कंदों का 0.3 प्रतिशत कैप्टान या 0.2 प्रतिशत बावीस्टीन से उपचार करें।
- उचित तापमान पर, हवादार स्थान पर व पतली तहों में भण्डारण करें।
- फसल के दौरान ही पौधों पर कैप्टान व बावीस्टीन का छिड़काव करें।

पुष्प-उत्पादकों के लिए पिछले कुछ वर्षों से दी जा रही राजकीय सुविधाएं

1. फूलों के बीच, कंद, कलम आदि पर शून्य आयात शुल्क।
2. क्यूरेंटाइन नियमों का सरलीकरण।
3. बीज, कंद, कलम आदि के लिए कोई आयात प्रमाण-पत्र जरूरी नहीं।
4. फूलों की उत्पादन, भण्डारण, प्रशीतन, परिवहन आदि सम्बन्धी मशीनरी के आयात पर कोई शुल्क नहीं।
5. पूर्णतया निर्यात के लिए उत्पादन करने वाली इकाईयों को घरेलू बाजार में 50 प्रतिशत फूलों की बिक्री की अनुमति।
6. हवाई अड्डों के साथ विशेष शीत गृह का निमार्ण।
7. फूलों के लिए हवाई भाड़े में छूट।

पुष्प-उत्पादकों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने वाली मुख्य एजेंसी

1. राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, सैक्टर-18, इंस्टीटयूशनल एरिया, गुड़गांव - 122 001 (हरियाणा)।
2. कृषि एवं प्रसंस्कृत उत्पादन निर्यात, वाणिज्य मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।
3. कृषि मंत्रालय, भारत सरकार कृषि भवन, नई दिल्ली
4. जिला उद्यान अधिकारी, बागवानी विभाग, हरियाणा।
5. राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक, भारत सरकार, दिल्ली।

उपर्युक्त सभी संस्थाए फूलों की खेती व निर्यात को बढ़ावा देने के लिए सभी प्रकार की वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं जैसे - फूलों की खेती के लिए शीत भण्डार के लिए, रेफ्रीजरेटिड वैन के लिए आदि।

सब्जी-उत्पादन

हरियाणा प्रदेश की जलवायु अनेक सब्जियों की काश्त के लिए उपयुक्त है। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली के आसपास तो सब्जियों, विशेषतौर पर विदेशी सब्जियों की काश्त अत्यन्त लाभकारी है। हरियाणा में सब्जियों की व्यावसायिक खेती की जानकारी इस खण्ड में प्रस्तुत है।

आलू

मिट्टी : आलू के लिए दोमट मिट्टी सर्वोतम है। खेत में जल निकासी का उचित प्रबन्ध होना चाहिए। मिट्टी का खारी अंग (पी.एच.) 6-7 के बीच होना चाहिए। लवणीय व क्षारीय भूमि इसकी खेती के लिए कदापि उपयुक्त नहीं होती। खेत समतल होना चाहिए व इसमें मोटे ढ़ेले न हों।

बीज स्रोत व बिजाई विधि : आलू का बीज सदैव स्वस्थ व रोग मुक्त होना चाहिए। बीज हमेशा केवल प्रमाणित व विश्वसनीय स्थान से ही लें, जैसे सब्जी विज्ञान विभाग, चौ. च. सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, एन.एस.सी. के नजदीकी विक्रय केन्द्र आदि। आलू का बीज प्राय: 2-3 साल के बाद बदल देना चाहिए। निरन्तर वही बीज प्रयोग करने से विषाणु रोगों का प्रकोप बढ़ता जाता है।

कन्द के आकार अनुसार ही बीज की मात्रा निर्धारित होती है। तीस से 70 ग्राम के कन्दों के लिए 55-60 सैं.मी. पंक्ति से पंक्ति व 15-20 सैं.मी. कन्द से कन्द फासला रखें। इन्हें 8-10 इंच मोटी डोलों पर बीजें। इस प्रकार 12 क्विंटल प्रति एकड़ बीज की आवश्यकता पड़ती है। यदि कन्दों का आकार बड़ा हो तो इन्हें 25 ग्राम के टुकड़े बनाकर 15 अक्टूबर के बाद ही बीजें व प्रति कन्द 2-3 साँखें अवश्य हों। कटे हुए कन्दों को बिजाई पूर्व 0.3 प्रतिशत इण्डोफिल एम-45 के घोल में 5 मिनट डुबोएं व 15 घण्टे छाया में सुखाकर बोएं।

कन्दों को वास्तविक बिजाई के एक सप्ताह पूर्व शीत भण्डार से निकालकर खुले, ठण्डे, हवा व रोशनी वाले स्थान पर रखें परन्तु उन पर धूप न पड़े। जो कन्द अच्छी तरह अंकुरित न हो, उनकी बिजाई न करें।

खाद व उर्वरक : बिजाई के 15-20 दिन पहले खेत की तैयारी के समय 20 टन देसी खाद अच्छी तरह मिला दें। साथ ही अगेती किस्मों के लिए 50 व पछेती के लिए 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा. फास्फोरस व 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति एकड़ प्रयोग करें। यदि मिट्टी रिजर से लगानी हो तो खाद डालने वाली मशीन से लाइन पर सतह से 5 सैं.मी. नीचे खाद डालें। यदि मशीन उपलब्ध न हो तो बैलों द्वारा पोरे से भी खाद बीज सकते हैं। इसके बाद इस पर सुहागा लगाना चाहिए।

सिंचाई : आलू की बिजाई पलेवा करने के बाद ही करें तो उत्तम है। प्रथम सिंचाई बिजाई के 8-10 दिन बाद व तत्पश्चात नवम्बर में 8-10 दिन व दिसम्बर-जनवरी में 10-15 दिन के अन्तर पर दें। निरन्तर उचित नमी बनी रहने से पैदावार अधिकतम मिलती है परन्तु बिजाई से करीब 40 दिन तक नमी सुनिश्चित करना आवश्यक है। डोलों के बीच की नाली की आधी उंचाई तक ही सिंचाई का पानी पहुँचना चाहिए।

तेलिया पानी का समुचित उपयोग : आलू में यदि तेलिया पानी का प्रयोग करना हो तो शेष सोडियम (आर.एस.सी.) की सुरक्षित सीमा (2.8 मिली इक्वेलैंट प्रति लीटर) को पानी में आर.एस.सी. की वास्तविक मात्रा में से घटाकर निम्न सूत्रानुसार जिप्सम का प्रयोग करें।

जिप्सम की मात्रा (कि.ग्रा. प्रति एकड़) = (वास्तविक आर. एस. सी.-2.8) x 30 x सिंचाईयों की संख्या

मिट्टी चढ़ाना : यदि खरपतवार नियन्त्रण रसायनों से करना हो तो मिट्टी चढ़ाने का कोई लाभ नहीं है। परन्तु यदि बिजाई के समय मिट्टी कम चढ़ी हो तो 25-30 दिन बाद मिट्टी चढ़ाएं। इससे उत्पादन में वृद्धि के साथ-2 हरे आलू भी नहीं बनते। यदि खेत में खरपतवार हों तो 20-25 दिन बाद निराई-गुड़ाई करके मिट्टी चढ़ाएं।

खुदाई : आलू खोदते समय मिट्टी में अधिक नमी नहीं होनी चाहिए। इसके लिए आलू खोदने के समय से 15-20 दिन पहले सिंचाई बन्द कर दें। अगेती खुदाई करने पर आलू कच्चे होते हैं। अत: अनका भण्डारण न करें व तुरन्त बेच दें।

भण्डारण : खुदाई के बाद कटे-फटे आलुओं की छंटनी कर दें और स्वस्थ आलुओं को छायादार स्थान पर 10-15 दिन रखें। ऐसा करते समय आलुओं को ढ़क दें वरना आलू हरे होने की आशंका रहती है। तापमान 20 डिग्री सेल्सियस के आसपास ही उचित है व आपेक्ष आर्द्रता अधिक बनी रहनी

चाहिए। इसके लिए समय-2 पर आलुओं के ऊपर पानी का छिड़काव किया जा सकता है। यदि तापमान अधिक हो तो कमरे में कूलर चला दे। भण्डारण पूर्व आलुओं का श्रेणीकरण करें व तत्पश्चात बोरी भरकर शीत भण्डार करे। शीत भण्डार में 0-4 डिग्री सेल्सियस तापमान व 80-85 प्रतिशत आपेक्ष आर्द्रता बनी रहनी चाहिए।

प्याज (रबी)

भूमि की तैयारी : प्याज के लिए सभी प्रकार की मिट्टी उपयुक्त है, परन्तु दोमट मिट्टी उत्तम रहती है। जल निकासी का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए। मिट्टी का खारी अंग (पी.एच.) 5.8 से 6.5 होना चाहिए। प्याज के बीज अंकुरण के लिए 20-25 व गांठों की वृद्धि के लिए 15.5-25 डिग्री सेल्सियस तापमान उत्तम है। खेत की 2-3 जुताई करने के बाद समतल क्यारियां बनाए।

पौध की तैयारी : बीज को कतारों में 4-5 सैं.मी. के फासले पर बिजाई करें। क्यारियों की चौड़ाई 60 सै.मी. व लम्बाई 1 मीटर सुविधानुसार रखते हैं। एक एकड़ के लिए 3 x 1 मीटर की 50-60 क्यारियां पर्याप्त होती हैं। बिजाई पूर्व 2-3 ग्राम थीरम प्रति कि.ग्रा. बीज उपचारित करें। नर्सरी की भूमि को भी 4-5 ग्राम थीरम प्रति वर्ग मीटर की दर से उपचारित करना चाहिए। बिजाई उपरान्त बीजों पर बारीक देसी खाद की हल्की परत डालनी चाहिए। बिजाई से 6-7 सप्ताह बाद पौधरोपण के लिए तैयार हो जाती हैं।

सिंचाई : शाकीय बढ़वार के समय सिंचाईयों में अन्तर अधिक रखते हैं जबकि गांठें बनने के समय जल्दी-2 सिंचाई करें। हल्की मिट्टी की अवस्था में सिंचाई जल्दी-2 करनी चाहिए। अनियमित सिंचाई से कंदों के दो फाड़ होने की आशंका रहती है। कंदों की भण्डारण क्षमता बढ़ाने व अच्छे पकाव के लिए कंद खोदने से 15 दिन पहले सिंचाई बन्द कर दें।

विभिन्न सब्जियों के लिए खाद एवं उर्वरकों की मात्रा (प्रति हेक्टेयर)

सब्जी	देसी खाद (टन)	पोषक तत्व (कि. ग्रा.) नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
आलू	20	50-60	20	40
प्याज खरीफ	10-12	50	15	10
प्याज रबी	20	50	20	10
लहसुन	20	32	20	10
मटर	8	12	20	-
गाजर, मूली, शलगम	20	24	12	12
फूलगोभी	20	50	20	20
बन्दगोभी	20	50	20	20
पालक	20	32	16	;
टमाटर	10	40	25	20
बैंगन	10	40	20	10
मिर्च	10	25	12	12
भिण्डी	10	40	24	-
घीया	6	20	10	10
चिकनी तोरी	6	20	10	10
धारीदार तोरी	6	20	10	10
ककड़ी	4-6	20	12	10
खरबूजा	4-6	20	12	10
टिण्डा	6	20	10	10
करेला	6	20	10	10
चप्पन कद्दू	6	20	10	10
ग्वार	4-6	12	20	-
हल्दी	10	40	20	20
जीरा	6	12	8	-
धनिया	8	25	20	-
मेथी	8	25	20	-
अदरक	10	40	20	20
ऐस्पेरेगस	20	60	25	50
ब्रोकली	60	125	50	50
लैटयूस	35	75	35	35
सैलरी	20	175	75	-
चीनी गोभी	40	125	50	50

नोट : देसी खाद, किसान खाद की सिफारिश की गई मात्रा (आधी या एक तिहाई), सिंगल सुपर फास्फेट व पोटाश खेत की तैयारी के समय डाल दें।

कटाई/खुदाई : हरी प्याज के लिए 60-90 दिन बाद उखाड़े व पके कंदों के लिए 125-150 दिन बाद खुदाई करें। गर्दन नर्म होने, पत्ते पीले होकर नीचे मुड़ने व मुरझाने पर खुदाई करना उपयुक्त है। जब 50 प्रतिशत पौधे ये लक्षण दिखाएं तो शेष पौधों को भी नीचे झुका दें ताकि एक साथ खुदाई हो सके।

खुदाई उपरान्त रख-रखाव व भण्डारण : कंद खोदने के बाद 4-5 दिन तक छाया में सुखाएं। तत्पश्चात कंदों की गर्दन 2-2.5 सैं.मी. ऊपर से काट दें। भण्डारण अवधि बढ़ाने हेतु खेत में फसल अवधि के दौरान फूल वाले डंठल समय-2 पर निकालते रहें।

प्याज (खरीफ)

पौध की तैयारी : इसे पौध व गंठी दोनो से लगाया जा सकता है। नर्सरी सिंचाई के स्त्रोत के समीप, ऊंचे व छायादार स्थान पर हो ताकि पौधे को लू (गर्मी) व वर्षा का जल खड़ा होने से बचाया जा सके।

गंठी तैयार करना : बिजाई का समय जनवरी के अन्तिम सप्ताह से फरवरी के प्रथम सप्ताह तक होता है और इसके लिए 3-4 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त है। इस हेतु 80-100 क्यारियां (3 x 1 मीटर) तैयार करनी चाहिए।

गंठियों का चुनाव : 1.5-2.0 सैं.मी. आकार अथवा 10-15 ग्राम वजन की रोग रहित गंठियां ही प्रयोग करें। एक एकड़ के लिए 5-6 क्विंटल गंठियों की आवश्यकता पड़ती है।

रोपाई : क्योंरियों में 15 x 10 सैं.मी. व डोलों पर 45 x 10 सैं.मी. कतार से कतार व पौधे से पौधा फासले पर लगाएं।

सिंचाई : यदि वर्षा न हो तो अगस्त से अक्टूबर तक 8-10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई दें। कंद की बढ़वार आरम्भ होने के बाद सिंचाई कम कर दें।

खुदाई : कंद नवम्बर के अन्त से दिसम्बर के मध्य तक तैयार हो जाते हैं। जिनकी पैदावार 80-100 क्विंटल होती है। कंद खुदाई से 10 दिन पहले सिंचाई बन्द कर दें।

सिंचाई : उचित नमी में बिजाई करना बेहतर है ताकि जमाव से पहले सिंचाई न देनी पड़े, परन्तु यदि बिजाई के समय नमी कम हो तो तुरन्त सिंचाई करें। तत्पश्चात मूली व शलगम में 3-4 व गाजर में 5-6 सिंचाइयों की जरूरत पड़ती है। सिंचाई करते समय पानी डोलियों की 3/4 ऊंचाई तक ही लगाना चाहिए। मौसम अनुसार मूली व शलगम में 8-10 व गाजर में 15-20 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए।

खुदाई : देसी किस्में अधिक से अधिक समय में तैयार होती है जबकि यूरोपीय व जापानी किस्में अपेक्षाकृत कम समय में। क्रमशः देसी मूली 45-55 व जापानी तथा यूरोपीय मूली 35-40, देसी गाजर 100-130 व यूरोपीय 60-70 और शलगम 45-60 दिन में तैयार हो जाती हैं।

गोभी वर्गीय सब्जियां

भूमि की तैयारी : हल्की मिट्टी में पैदावार भरपूर मिलती है। मिट्टी का खारी अंग 6-6.5 होना चाहिए। चिकनी मिट्टी में बढ़वार मन्द होती है।

पौध की तैयारी : पौध तैयार करने के लिए जमीन से 15 सैं.मी. ऊंची 3 x 1 मीटर आकार की क्यारियां बनानी चाहिएं। एक एकड़ के लिए लगभग 10-15 क्यारी पर्याप्त रहती हैं। क्यारियों में प्रचुर मात्रा में देसी खाद डालकर खुदाई करें और समतल बनाकर कतारों में बिजाई करें। बिजाई उपरान्त देसी खाद की हल्की परत ऊपर डालकर फव्वारे से सिंचाई करें। निरंतर उचित नमी बनाए रखें। पौध 25-30 दिन में तैयार हो जाती है।

रोपाई : रोपाई के लिए मेंढ़ व समतल क्यारी दोनों प्रयोग कर सकते हैं। अगेती किस्मों की रोपाई मेंढ़ पर ज्यादा लाभकारी है। अन्धी पौध (बिना शीर्ष) की रोपाई नहीं करनी चाहिए। निराई-गुड़ाई के समय मिट्टी चढ़ाना लाभप्रद पाया गया है।

सिंचाई : अगेती किस्मों में 5-7 दिन व मध्यम तथा पछेती किस्मों में 10-15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। फूल बनने के समय पर्याप्त नमी होना अनिवार्य है।

फूलों (फूलगोभी) को ढ़कना : फूल विकसित होने के बाद उसे धूप से (जलकर पीला पड़ने से) बचाने के लिए फूलों को ढ़कना आवश्यक है। इसके लिए या तो गोभी के पत्तों को फूल पर झुकाकर 4-5 दिन (कटाई लायक होने तक) के लिए बांध दें या गोभी के पत्ते तोड़कर फूल पर ढ़क दें। कुछ किस्मों में यह प्राकृतिक तौर पर हो जाता है, उनमें ढ़कनें की जरूरत नही पड़ती।

पालक :

भूमि की तैयारी : इसकी बिजाई सभी प्रकार की भूमि पर की जा सकती है परन्तु बालु-दोमट मिट्टी उत्तम पाई गई है। मिट्टी का खारी अंग 6 से 7 तक होना चाहिए। इसे पूरे वर्ष लगाया जा सकता है। खेत की 3-4 बार जुताई करके समतल क्यारियां बनाकर बिजाई करें।

सिंचाई : बिजाई के तुरन्त बाद सिंचाई करें। इसके बाद 8-10 के अन्तर पर सिंचाई करें।

कटाई : पहली कटाई 30-35 दिन बाद करनी चाहिए। इसके बाद 15-20 दिन के अन्तर पर कटाई वांछित है।

टमाटर, मिर्च व बैंगन

भूमि की तैयारी : इन्हें रेतीली से चिकनी मिट्टी तक सभी प्रकार की भूमि पर लगाया जा सकता है परन्तु उपजाऊ दोमट मिट्टी उत्तम है। मिट्टी का खारी अंग 6-7 होना चाहिए। खेत की 2-3 जुताई करके समतल क्यारियां बनाएं। इनके लिए 21 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त है। 10 डिग्री सेल्सियस से नीचे व 35 डिग्री सेल्सियस से ऊपर फलन बहुत कम होता है। पाले के प्रति ये बहुत नाजुक हैं। अधिक तापमान व आर्द्रता की स्थिति में पत्तों पर बीमारियां अधिक आती हैं।

पौध की तैयारी : नर्सरी की भूमि की 2-3 गहरी जुताई करें। साथ ही प्रचुर मात्रा में गली-सड़ी देसी खाद डालें। तत्पश्चात 3 x 1 मीटर की क्यारियां (15 से 40) बनाएं। बीज को थीरम से उपचारित करके पंक्तियों में बिजाई करके ऊपर हल्की परत रखें अथवा बारीक देसी खाद भी डालें और फव्वारे से सिंचाई करें। पौध उगने के 5-7 दिन बाद आर्द्र गलन से बचाव के लिए 0.2 प्रतिशत कैप्टान या थीरम का छिड़काव कर दें। पौध 4-5 सप्ताह में तैयार हो जाती है। शीत ऋतु में पौध छप्पर या पोलीथीन के घर में तैयार करें जिसमें दिन में धूप पहुँचने का भी प्रावधान हो। ऐसी सुविधा न हो तो शीत ऋतु में पौध की क्यारियों को रात्रि में पोलीथीन की चद्दर अथवा सरकण्डे आदि से प्रति दिन ढ़क दें व दिन में हटा दें। इस प्रकार पौध जल्द तैयार होती हैं।

ट्रे में पौध तैयार :

हाल ही में सब्जियों की पौध (विशेषतौर पर सर्दी में) तैयार करने के लिए बहुत हल्की व सुविधाजनक प्लास्टिक की ट्रे ईजाद की गई हैं जिनमें परम्परागत विधि की तुलना में

बहुत जल्द, बहुत अच्छी व बहुत सस्ती पौध तैयार की जा सकती है।

एक ट्रे में 98 पौध तैयार की जा सकती हैं। बहुत हल्की होने के कारण ट्रे कहीं भी रखी जा सकती हैं। तैयार पौधों की जड़ों की मिट्‌टी न हिलने के कारण खेत में शत प्रतिशत सफलता मिलती है। आजकल ये ट्रे टमाटर, मिर्च, बैंगन, घीया, ककड़ी, चप्पन कद्‌दू आदि अनेक सब्जियों के लिए प्रयोग की जा रही हैं।

सिंचाई : पौध रोपण के तुरन्त बाद सिंचाई अनिवार्य है। तत्पश्चात मिट्टी व जलवायु के मद्‌देनजर गर्मी में 5-7 दिन व सर्दी में 10-15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करें।

भिण्डी

भूमि की तैयारी : भिण्डी को सभी प्रकार की मिट्टी में लगाया जा सकता है परन्तु 6-6.8 खारी अंग वाली दोमट मिट्‌टी जिस पर जल निकासी का उत्तम प्रबन्ध हो अति उपयुक्त है। 17^0 सेल्सियस से नीचे बीज का जमाव नहीं होता व 42^0 सेल्सियस से अधिक तापमान पर फूल गिरने लगते हैं। फसल वृद्धि व फलन के लिए 24^0 सेल्सियस तापमान उत्तम होता है।

बेल वाली सब्जियां

भूमि की तैयारी : बेल वाली सब्जियों को अनेक प्रकार की भूमि पर लगाया जा सकता है परन्तु अच्छी उपजाऊ दोमट मिट्टी जिस पर जल निकासी का सही प्रबन्ध हो उत्तम हैं। मिट्टी का खारी अंग 6-7 होना चाहिए। ये मामूली लवणता सहन कर सकती हैं परन्तु पाले के प्रति नाजुक हैं। इनके लिए मिट्टी का उपयुक्त तापमान 18-22^0 सेल्सियस है।

खेत की 2-3 बार जुताई करके सुहागा लगा दें। तत्पश्चात बेल वाली सब्जियों के लिए निर्धारित आकार की डोलें या शैय्या तैयार करके उन पर बिजाई करें। बेल वाली सब्जियों की अगेती फसल प्राप्त करने के लिए दिसम्बर अन्त या जनवरी माह में पोलिथीन की थैलियों में बिजाई करके पौध तैयार की जा सकती है जिसे सर्दी कम होते ही खेत में रोपित कर देते हैं।

पोलिथीन की थैलियों में पौध तैयार करना :

इसके लिए 15 x 10 सैं.मी. आकार की थैलियों को मिट्‌टी व गोबर की खाद (1 : 1) के बारीक मिश्रण से भरा जाता है। तत्पश्चात इनमें 2-3 बीज प्रति थैली बोने चाहिए। थैली की तली में छोटे-2 दो छिद्र कर देने चाहिए। थैलियों में फव्वारे से सिंचाई करके इन थैलियों को किसी छप्पर, हरित घर आदि में रखें जहां दिन में धूप मिलने के साथ-2 रात्रि में सर्दी से बचाव भी हो। खुले में थैलियों में पौध तैयार करने के लिए इनको रात्रि में काली पोलिथीन की चद्‌दर अथवा सरकण्डा

आदि से ढ़कना अनिवार्य है। 30-40 दिन की पौध होने पर खेत में स्थानान्तरित करें। वैकल्पिक तौर पर इसी उद्देश्य के लिए बनी प्लास्टिक की ट्रे भी पौध तैयार करने के लिए प्रयोग की जा सकती है।

सिंचाई : मिट्टी, जलवायु व फसल की आवश्यकतानुसार गर्मी में 5-7 दिन व वर्षा ऋतु में वर्षा न होने की स्थिति में 8-10 दिन में सिंचाई करें।

खरबूजा (हरा मधु) व तरबूज की बेलों की काट-छांट:

खरबूजे में मुख्य तने पर नर फूल आते हैं तथा द्वितीय तथा तृतीय शाखाओं पर नर व पूर्ण फूल दोनों। हरा मधु में पूर्ण फूल दूसरी शाखा पर 7वीं गांठ पर आते हैं। अत: 7वीं गांठ से पहले मुख्य शाखा पर आने वाली सभी दूसरी शाखाओं को आरम्भ में ही काट दें। इससे बिना काट-छांट की बेलों की तुलना में फलों की संख्या व आकार में वृद्धि के फलस्वरूप उत्पादन में 20-25 प्रतिशत बढ़ोतरी होती है।

तरबूज की बेलों को 4-6 पत्तियों की अवस्था पर मुख्य शीर्ष को काटने से 10 दिन अगेती फसल तैयार हो जाती है और उत्पादन में 10-15 प्रतिशत वृद्धि होती है।

ग्रीन हाऊस/पोलिथीन हाऊस/ग्लास हाऊस (हरित घर) में सब्जी उत्पादन :

हाई-टैक बागवानी के तहत आजकल उन सब्जियों, जिनका उत्पादन अधिक होता हो (जैसे टमाटर, खीरा, घीया आदि), हरित घर में उत्पादन किया जाता है और वह भी उस समय जब खुले में उत्पादन सम्भव न हो या लाभकारी न हो। इस विधि से पैदावार बहुत अधिक होने के साथ-2 सब्जियों की गुणवता भी उत्तम होती हैं इस उत्पाद को बहुत अच्छा बाजार भाव मिलता

है व परम्परागत सब्जी उत्पादन की तुलना में कई गुणा लाभ कमाया जा सकता है। इस विधि में अन्दर का तापमान व आर्द्रता नियन्त्रित होते हैं और सिंचाई टपका- टपका प्रणाली से की जाती है।

सब्जियों में टपका-टपका (ड्रिप) सिंचाई :

यह सिंचाई की आधुनिक प्रणाली है जिसका प्रयोग मूलत: फलवृक्षों में आरम्भ हुआ था परन्तु इसका प्रयोग अब सब्जियों में भी लाभप्रद सिद्ध हुआ है। इसमें पौधों की लाईन के साथ-साथ 12 या 16 मि.मी. की पार्श्व पाईप डाली जाती है जो मुख्य पाईप लाइन से जुड़ी होती हैं तथा जिन पर प्रत्येक पौधे के साथ 1 या 2 ड्रिपर लगे होते हैं, जो आवश्यकता अनुसार पानी देते हैं। इस विधि से पानी की बहुत बचत होती है और टयूबवैल की क्षमता के अनुरूप एक साथ 5-20 एकड़ तक सिंचाई की जा सकती है। इसकी आरम्भिक कीमत प्रति एकड़ 8000-12000 रूपये है।

सब्जियों के मुख्य कीट एवं उनकी रोकथाम

कीट का नाम	प्रकोपित फसलें	हानि के लक्षण	रोकथाम के उपाय
तेला/हरा तेला	आलू, बैंगन, भिण्डी बेल वाली सब्जियां लोबिया, सेम	हरे रंग के शिशु व प्रौढ़ पत्तियों के निचले सिरे से रस चूसते हैं। फलस्वरूप पत्तियां मुड़कर पीली हो जाती हैं और सूख जाती हैं। फसल जली हुई नजर आती है।	200-300 मि.ली. मैटासिस्टाक्स 25 ई.सी. या 300 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में छिड़काव करें।
चेपा	आलू, मटर, मूली, फूल व बन्द गोभी, टमाटर, बेल वाली सब्जियां, धनिया, लोबिया, सेम	हरे रंग के कीट जूंओं जैसे दिखते हैं और पत्तों के निचले सिरे से रस चूसते हैं।	उपर्युक्त
चूरड़ा	प्याज, मटर, बैंगन	इसके पीले-भूरे बेलन आकार के शिशु व प्रौढ़ पत्तों से रस चूसते हैं। ग्रस्त पत्तियों पर सफेद धब्बे नजर आते हैं। प्रकोप अधिक होने पर पत्ते चोटी पर चांदी जैसे सफेद होकर सूख जाते हैं। यह फरवरी से मई तक सक्रिय रहता है।	300 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 375 मि.ली. इण्डोसल्फान 35 ई.सी. या 75 मि.ली. फेनवेलरेट 20 ई.सी. या 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. का 200 लीटर पानी में छिड़काव करें।
फल छेदक सूण्डियां	मटर, टमाटर, बैंगन, सेम	ये सूण्डियां फल बन्धने के बाद बारीक छिद्र के माध्यम से अन्दर घुस जाती हैं और आन्तरिक भाग को खा जाती हैं व ऐसे फल मण्डीकरण के लिए उपयुक्त नहीं रहते।	उपर्युक्त
डायमण्ड बैक मोथ	फूल व बन्द गोभी गांठ गोभी	इसकी छोटी-2 सूण्डियां पत्तों को खुरच-2 कर खाती हैं तथा प्रकोपित पत्ते मात्र सफेद झिल्ली भर रह जाते हैं। प्रौढ़ गोल छिद्र बनाते हैं।	400 ग्राम बैसिलस थूरीजैन सिस या 60 मि.ली. नुवान 76 ई.सी. या 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 375 मि.ली. एण्डोसल्फान 35 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
बन्द गोभी की सूण्डी	बन्दगोभी	मखमली गहरे हरे रंग की 3-4 सैं.मी. लम्बी सूण्डियों के शरीर पर धब्बे, पीली धारियां व सफेद बाल होते हैं। छोटे कीट समूह में व बड़े कीट फैलकर खाते हैं और पत्तों को छलनी कर देते हैं।	400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 375 मि.ली. एण्डोसल्फान 50 ई.सी. का 200-250 लीटर पानी में छिड़काव करें।
सफेद मक्खी	टमाटर, बैंगन, भिण्डी, लोबिया, सेम	सफेद मटमैले रंग की अण्डाकार सफेद पंखों पर मोम की तह लिए होती है जिसके शिशु व प्रौढ़ पत्तों की निचली सतह से रस चूसते हैं। यह विषाणु रोग के वाहक का कार्य करती हैं तथा वर्षा ऋतु में अधिक सक्रिय रहती है।	250-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के अन्तराल पर तीन बार छिड़काव करें।

कीट का नाम	प्रकोपित फसलें	हानि के लक्षण	रोकथाम के उपाय
हड्डा भुंडी	बैंगन	यह अर्धवृताकार ताम्बे जैसे रंग की होती है जिसके प्रथम जोड़ी पंखों पर काले धब्बे होते हैं तथा इसकी लटें मजबूत कांटेदार व पीले रंग की होती हैं।	उपर्युक्त
तना व फल छेदक सुण्डी	बैंगन, भिण्डी	यह गुलाबी सुण्डी है जो फूलने से पूर्व नई शाखाओं में छिद्र करके खाती है तथा प्रकोपित शाखाएं सूख जाती हैं। मई से अक्टूबर तक प्रकोप अधिक होता है और प्रकोपित फल मण्डीकरण योग्य नहीं रहते।	उपर्युक्त
लाल अष्टपदी/ अष्टपदी	बैंगन, भिण्डी, बेल वाली सब्जियां	इसका प्रकोप सूखे मौसम में अधिक होता है। इसके पीले व लाल रंग के शिशु व प्रौढ़ पत्तों की निचली सतह पर जाला बनाकर रहते हैं। रस चूसने से सफेद धब्बे बन जाते हैं। अधिक प्रकोप की अवस्था में फूल कम आते हैं।	उपर्युक्त
दीमक	सभी फसलें	इसका प्रकोप यूं तो वर्ष भर जारी रहता है विशेषकर शुष्क क्षेत्रों में, परन्तु फरवरी-मार्च तथा सितम्बर से नवम्बर तक अधिक होता है। हल्के भूरे रंग के कीट जमीन में रहकर जड़ व तने को खा जाते हैं।	• कभी कच्ची खाद का प्रयोग न करें। • खेत में पिछली फसल के अवशेषों को को नष्ट कर दें। • खड़ी फसल में 1.0-2.0 लीटर एण्डोसल्फान 35 ई.सी. या क्लोरपायरीफास 20 ई.सी. 15-20 किलो बालू रेत के साथ मिलाकर छिड़क कर सिंचाई करें या सिंचाई के जल के साथ नाके पर छोड़ें। 5 कि.ग्रा. कार्बेरिल 5-डी को 5 कि.ग्रा. राख में मिलाकर धूड़ा करें या 200 मि.ली. एण्डोसल्फान 35 ई.सी. या 25 मि.ली. साइपरमेथिन 25 ई.सी. या 100 ग्रा. कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. को 100 लीटर पानी में घोलकर छिड़कें।
फल-मक्खी	ककड़ी, काली तोरी, करेला, टिण्डा, घीया, खरबूजा	यह मक्खी फलों में छिद्र बनाकर अन्दर घुसकर कोमल गुद्दे में अण्डे देती है। सूण्डियां अण्डों से निकलकर गुद्दे को खाती हैं जिसके फलस्वरूप फल मण्डीकरण योग्य नहीं रहते।	250 मि.ली. फैनिट्रोथियान 50 ई.सी. या 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 500 ग्राम कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। साथ 1.25 कि.ग्रा. गुड़ भी मिलाएं।

सब्जियों की मुख्य बीमारियां एवं उनकी रोकथाम

बीमारी का नाम	प्रकोपित फसलें	हानि के लक्षण	रोकथाम के उपाय
अगेती अंगमारी	आलू	इस व्याधि में भूरे धब्बे पत्तों के किनारे व ऊपर फैले रहते हैं जो कुछ समय बाद काले भूरे व गोल हो जाते हैं। इससे कुछ शाखाएं अथवा पूरा पौधा भी मर जाता है।	600-800 ग्राम ब्लाईटाक्स-50 या इण्डोफिल जैड-78 या इण्डोफिल एम-45 को 200 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें व 15 दिन बाद दोहराएं।
पछेती अंगमारी	आलू	सबसे पहले पत्तों पर काले-2 चकते बनते हैं जो बाद में बढ़ जाते हैं और पत्ते मर जाते हैं। नम मौसम में इसका प्रकोप अधिक होता है और पत्तों से बदबू आती है। भूमिगत कन्द भी प्रभावित होते हैं और फसल पकने से पूर्व ही नष्ट हो जाती है।	● स्वस्थ व रोगमुक्त बीज का प्रयोग करें। ● 600-800 ग्राम इण्डोफिल एम-45 को 4-5 बार 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।
काला कोढ़	आलू	प्रभावित कंदों पर काली पपड़ी बन जाती है जिसमें इस रोग के फफूंद पाये जाते हैं।	● स्वस्थ बीज का चुनाव करें। ● भण्डारण पूर्व बीमारी ग्रस्त आलुओं को निकाल कर फेंक दें। स्वस्थ कंदों को 0.25 प्रतिशत एमीसान के घोल में 15 मिनट डुबोएं।
चारकोल गलन	आलू	इसमें कंदों की आँखों के चारों ओर काले धब्बे बन जाते हैं जो सारे कंद को काला बना देते हैं।	● अगेती किस्में लगाएं। ● इस बीमारी से संक्रमित कंद न बीजे। ● आलू देरी से खोदने हो तों सिंचाई दें। ● कंदों को 0.25 प्रतिशत एमीसान के घोल में डुबोकर उपचार करें।
स्कैब	आलू	कंदों पर कार्क जैसे स्थान दिखाई पड़ते हैं जो कभी-2 हल्के या गहरे भूरे रंग के होते हैं।	● स्कैब मुक्त बीज प्रयोग करें। ● शीत-भण्डारण पूर्व 30 मिनट तक 3 प्रतिशत बोरिक अम्ल के घोल में डुबोएं। ऐसा न होने की अवस्था में बिनाई पूर्व कंदों की 0.25 प्रतिशत एमीसान के घोल में 15-20 मिन्ट तक डुबोएं। ● फसल-चक्र अपनाएं।
ब्लैक लैग व मृदु गलन	आलू	रोगग्रस्त पौधों का रंग फीका/पीला पड़ने लगता है व पौधे मुरझाकर मर जाते हैं। जमीन की सतह पर तना काला हो जाता है।	● रोग मुक्त बीज प्रयोग करें। ● रोग ग्रस्त पौधों को निकाल कर दबा या जला दें। ● बार-2 खेत में प्रवेश न करें।
आलू का एक्स व एस विषाणु रोग या लेटैंट मोजैक	आलू	पौधों के पत्ते मुड़ जाते हैं या उन पर हरे चकते बन जाते हैं। अधिक प्रकोप से पत्ते सिकुड़ जाते हैं।	● रोग मुक्त बीज प्रयोग करें। ● प्रभावित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें। ● खेत में बार-2 प्रवेश न करें।

बीमारी का नाम	प्रकोपित फसलें	हानि के लक्षण	रोकथाम के उपाय
आलू का विषाणु वाई या वैन बैंडिग मोजैक	आलू	पत्तों की नाड़ मुड़ जाती है व हरे-पीले चकते बन जाते हैं। कंद छोटे रह जाते हैं व इनकी संख्या भी घट जाती है।	● रोग रहित बीज प्रयोग करें। ● 300 मि.ली. रोगोर या मैटासिस्टाक्स प्रति एकड़ 200-300 लीटर पानी में 10-15 दिन के अन्दर पर 3-4 बार छिड़काव करें।
रूगोस मोजैक	आलू	पत्ते खुरदरे व फटे हुए दिखाई पड़ते हैं। यह उपरोक्त दोनों विषाणुओं का मिश्रित प्रभाव है।	जैसा उपरोक्त दोनों विषाणुओं हेतु दिया गया है।
पर्पल ब्लाच	प्याज	इस रोग में जामुनी या गहरे-भूरे धब्बे फूलों की डण्डी व पत्तियों पर बनते हैं।	400 ग्राम इण्डोफिल एम-45 प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में छिड़काव करें।
पाऊडरी मिल्डयू या सफेदा या सफेद चूर्णी रोग	मटर, जीरा, बेल वाली सब्जियां	पत्तियों, फलियों व तनों पर सफेद पाऊडर नजर आता है।	80 मि.ली. कैराथेन 40 ई.सी. या 400 ग्राम सल्फैक्स 200 लीटर पानी में छिड़काव करें।
जड़ गलन या उखेला	मटर, भिण्डी, जीरा	पौधों की जड़े गल जाती हैं व पौधे अचानक मर जाते हैं।	2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज के हिसाब से बावीस्टीन से उपचार करें। फसल चक्र अपनाएं तथा अगेती बिजाई न करें। विशेषतौर पर जहां हर वर्ष रोग आता हो।
रतुआ	मटर	पत्तों पर पीले अथवा सन्तरी रंग के धब्बे बनते हैं।	पछेती फसल में इसका प्रकोप अधिक होता है। 400 ग्राम इण्डोफिल एम-45 को 200 लीटर पानी में 10-15 दिन के अन्तर पर 2-3 बार छिड़काव करें।
आल्टरनेरिया ब्लाइट	मूली, गाजर, शलगम	पौधों की पत्तियों व फलियों पर पीले-भूरे धब्बे बनते हैं। कभी-2 इन पर धारियां नजर आती हैं।	● खेत में साफ-सफाई रखें। ● खरपतवार न उगने दें। ● 400 ग्राम इण्डोफिल एम-45 या 200 ग्राम कॉपरआक्सीकलोराइड 200 लीटर पानी में छिड़कें।
आर्द्र गलन	टमाटर, मिर्च, बैंगन, फूलगोभी, बन्दगोभी	इस रोग में बीज अंकुरण से पहले व बाद में पौधे जमीन के पास से गलकर मर जाते हैं।	● नर्सरी व रोगग्रस्त खेत में फसल चक्र अपनाएं। ● बिजाई पूर्व 2 ग्रम कैप्टान प्रति कि.ग्रा. की दर से बीजोपचार करना चाहिए। ● पौध उगने के बाद 0.3 कैप्टान का छिड़काव करें।
आल्टरनेरिया अंगमारी	गोभीवर्गीय सब्जी, जीरा	पत्तियों व बीज वाली फसल में फलियों पर गोलाकार पीले-भूरे धब्बे बनते हैं।	400 ग्राम इण्डोफिल एम-45 + 200 लीटर पानी के घोल का 10-15 दिन के अन्तर पर 3-4 बार छिड़काव करना चाहिए।

बीमारी का नाम	प्रकोपित फसलें	हानि के लक्षण	रोकथाम के उपाय
डाऊनी मिल्डयू	उपर्युक्त	पिन आकार के छोटे-2 धब्बे बनतें हैं, जो बाद में एक दूसरे से मिलकर बड़े बन जाते हैं और उनका रंग पीला या भूरा हो जाता है। रोग की तीव्र अवस्था में पत्तियां सूख जाती हैं और फूल भी भूरे हो जाते हैं। बेसमय वर्षा रोग को बढ़ावा देती है।	उपर्युक्त
श्याम गलन	-	पत्तों के किनारों पर अंग्रजी के 'वी' अक्षर के आकार के पीले धब्बे बनते हैं जो बाद में काले-भूरे हो जाते हैं। शिराएं काली पड़ जाती हैं और पत्तियाँ गिर जाती हैं।	● रोगमुक्त बीज व पौध का प्रयोग करें। ● नर्सरी में बिजाई पूर्व 2.5 ग्राम कैप्टान प्रति कि. ग्रा. बीज की दर से उपचार करें। ● 0.02 प्रतिशत् कॉपर आक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। ● फसल अवशेष को नष्ट कर दें।
अगेता झुलसा	टमाटर	पत्तों और फूलों पर गोल व तिकोने गहरे-भूरे या काले धब्बे तथा तने पर पहले अण्डाकार और फिर बेलनाकार धब्बे बनते हैं। जिससे पौधे सूख जाते हैं।	● नर्सरी में गली-सड़ी खाद डालें। ● अधिक सिंचाई न दें। ● आर्द्र गलन के लिए बीजोपचार करें। ● 400 ग्राम इण्डोफिल एम-45 का 200 लीटर छिड़काव करें।
पत्तों का ब्लाच	हल्दी	पत्तों पर सफेद दबे हुए निशान पड़ जाते हैं, जो बाद में बड़े हो जाते हैं और पत्ते सूख जाते हैं।	400 ग्राम इण्डोफिल एम-45 को 200 लीटर पानी में 10-12 दिन के अन्तराल पर 2-3 बार छिड़काव करें।
पत्ता धब्बा रोग	उपर्युक्त	पत्तों पर अण्डे के आकार के धब्बे बन जाते हैं जिनमें काले रंग की धारियां दिखाई देती हैं। धीरे-धीरे पत्ते सूख जाते हैं।	उपर्युक्त

नोट :-

1. कीटनाशक, फफूंदीनाशक व अन्य रसायनों की सिफारिश की गई मात्रा से अधिक प्रयोग न करें।
2. पानी की पूरी मात्रा प्रयोग करें।
3. छिड़काव पूर्व तैयार माल तोड़ लें।
4. छिड़काव के बाद निर्धारित अवधि बीतने पर ही सब्जियां तोड़ें।
5. जिन फसलों के पत्तें चिकने हों उनमें सिफारिशानुसार चिपकाने वाला पदार्थ स्टीकर. जैसे सर्फ, टवीन-20, सैलवेट-99, ट्रिटान आदि व कीटों को आकर्षित करने वाला पदार्थ जैसे गुड़ आदि अवश्य प्रयोग करें।
6. इंजन वाले पम्प पावर स्प्रेयर. से छिड़काव करते समय पानी की मात्रा 1/10 कर दें परन्तु दवाई उतनी ही रखें।
7. कीटग्रस्त फलों को तोड़कर गड्ढे में दबा दें।
8. कीट व बीमारियों के वैकल्पिक मेजबान पौधों को उगने/पनपने दें।
9. ओंस के समय घूड़ा न करें विशेषकर बेल वाली सब्जियों में।
10. केवल सिफारिश किए रसायन ही प्रयोग करें।
11. विभिन्न रसायनों की समतता मिलन-सारता का ध्यान रखें।

उद्धरण

रणबीर सिंह सैनी, राजेन्द्र कुमार गोदारा, सुरेश फोर, अमरजीत सिंह एवं उमेश कुमार शर्मा. 2007. कृषि विविधीकरण में बागवानी, बुलेटिन संख्या (21), विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार।

लेखक

रणबीर सिंह सैनी, वरिष्ठ जिला विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी) कृषि विज्ञान केन्द्र, झज्जर

राजेन्द्र कुमार गोदारा, वरिष्ठ विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सुरेश फोर, वरिष्ठ तकनीकी सहायक (सब्जी विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, सोनीपत

अमरजीत सिंह, वरिष्ठ जिला विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी), कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक

उमेश कुमार शर्मा, वरिष्ठ जिला विस्तार विशेषज्ञ (फार्म प्रबन्धन), कृषि विज्ञान केन्द्र, झज्जर

संपादक

कृष्णा हुड्डा, सह-प्राध्यापिका (हिन्दी), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

आर. पी. बंसल, सह-निदेशक (प्रकाशन), चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

इस प्रकाशन में प्रस्तुत की गई सामग्री और लिए गए पदनाम किसी भी रूप में चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के विचारों की अभिव्यक्ति नहीं है तथा किसी भी देश, क्षेत्र, शहर और इलाके या उसके अधिकारियों या सीमाओं और सीमान्त प्रदेशों की सीमांकन की कानूनी स्थिति से संबंधित नहीं है। जहां कहीं भी ट्रेड नामों का इस्तेमाल किया गया है, उसे किसी की पुष्टि या किसी के प्रति भेदभाव नहीं समझा जाना चाहिए।

Ganesh Graphics, Ph. 9354322399

Publications of Directorate of Extension Education, CCSHAU, Hisar

1. Herbicide Resistant *Phalaris minor* in Wheat – A Sustainability Issue
2. Major Weeds of Rice-Wheat Cropping System
3. धान–गेहूँ फसल–चक्र में समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन : वर्मीतकनीक
4. फसलों में खरपतवार नियंत्रण
5. भूँईफोड़/मरगोजा (आरोबेंकी इजिप्टियाका पर्स.) की तिलहनी तोरिया में ग्रस्तता एवं प्रबंध हेतु विकल्प
6. Broomrape (*Orobanche aegyptiaca* Pers.) Infestation in Oilseed Rapes and Management Options
7. Long-term Response of Zero-Tillage – Soil Fungi, Nematodes & Diseases of Rice-Wheat System
8. IPM Issues in Zero-Tillage System in Rice-Wheat Cropping Sequence
9. Zero Tillage – The Voice of Farmers
10. कृषि में विविधीकरण – खुम्बी उत्पादन का सफल प्रयास
11. Animal Production and Health : Frequently Asked Questions
12. Project Workshop Proceedings on Accelerating the Adoption of Resource Conservation Technologies in Rice-Wheat Systems of the Indo-Gangetic Plains, June 1-2, 2005
13. आंवला उत्पादन एवं परिरक्षण
14. Addressing Sustainablility Issues of Rice-Wheat Cropping System
15. ग्रामीण उत्थान में डेयरी का महत्त्व
16. ब्रायलर पालन
17. मधुमक्खी पालन – लाभदायक व्यवसाय
18. बेर – उत्पादन व परिरक्षण
19. ग्रामीण जैविक संसाधन – पशुपालन की भूमिका
20. नींबूवर्गीय फल – उत्पादन एवं परिरक्षण